दिसम्बर-2013 ◆ वर्ष 2 ◆ अंक 7 ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

दिसम्बर-२०१३

सकल विश्व में
मनुज मात्र तक
फैल रहा है
ज्ञान प्रकाश
ऋषिवर तेरी
अमर साधना
है प्यारा
सत्यार्थ प्रकाश

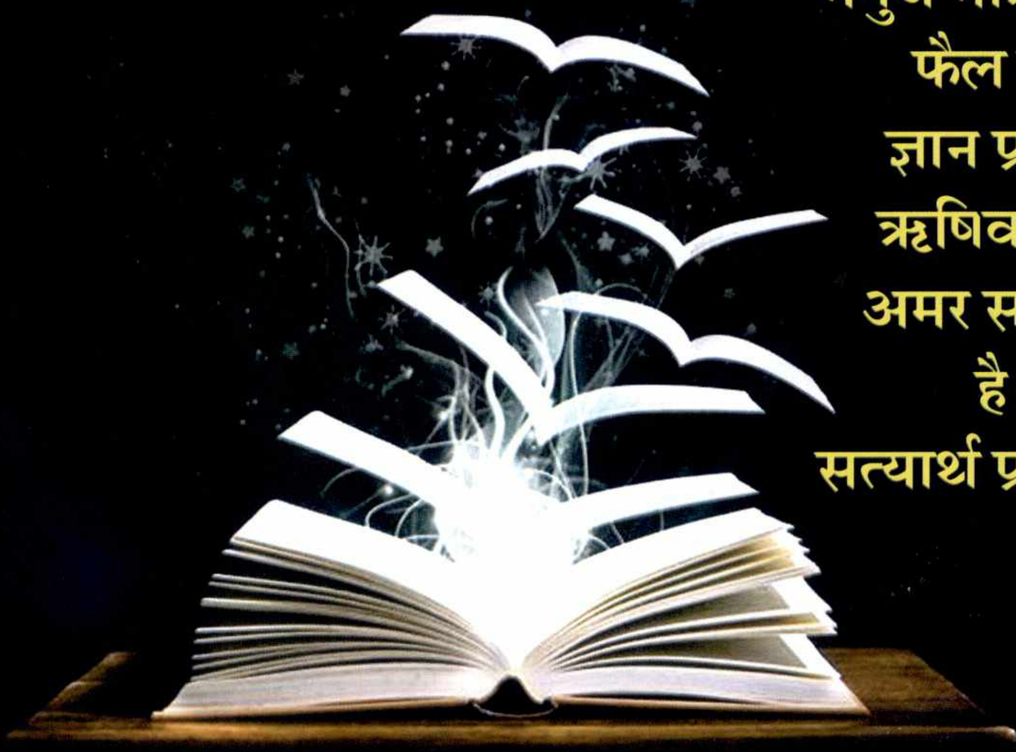

सत्यार्थप्रकाश

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹ १० २४

www.thearyasamaj.org

www.thearyasamaj.org

प्रमुख संरक्षक - सत्यार्थ सौरभ

महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच.)
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग

नवनीत आर्य

व्यवस्थापक

सुरेश पाटोदी (मो.9829063110)

सहयोग ◆ भारत	विदेश
संरक्षक - ११००० रु.	$ 1000
आजीवन - १००० रु.	$ 250
पंचवर्षीय - ४०० रु.	$ 100
वार्षिक - १०० रु.	$ 25
एक प्रति - १० रु.	$ 5

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, उदयपुर खाता संख्या : ३१०१०२०१००४१५१८ IFSC CODE- UBIN 0531014 में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३११४
मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमी
विक्रम संवत्
२०७०
दयानन्दाब्द
१८९

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

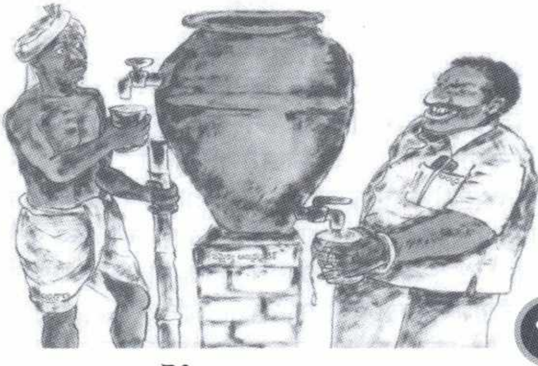

१४

भारत में व्याप्त भ्रष्टाचार

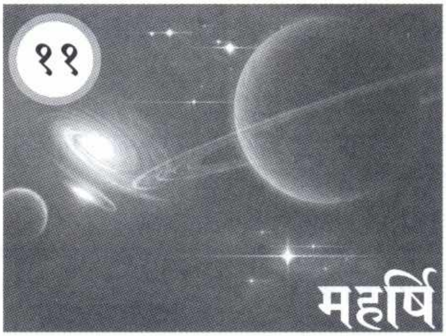

११

ब्रह्माण्ड की खोज और महर्षि दयानन्द

December - 2013

०४	वेद सुधा
०६	मत चूके चौहान
०८	स्वामी श्रद्धानन्द
१०	राम तुम्हें शत-शत नमन
१७	यजुर्वेदीय भाष्य
१६	शिक्षा सबके लिए
२४	खगोलशास्त्री : भास्कराचार्य
२५	Religion
२६	बलिवैश्वदेव यज्ञ कब और कहाँ?
२६	लोक पर्व सांझी
३०	बाल वाटिका

समाचार २२

हलचल २३

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)
कवर २ व ३ (भीतरी आवरण) रंगीन
३५०० रु.
अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	२००० रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	१००० रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	७५० रु.

स्वामी श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - २ अंक - ७

मुद्रण द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.)
११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) ३१३००१
(०२९४) २४१७६६४ , ९३१४५३५३७६, ९८२८९२९७४७
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

वेद सुधा

अहिंसा

मा स्रेधत सोमिनो दक्षता महे कृणुध्वं राय आतुजे ।
तरणिरिज्जयति क्षेति पुष्यति न देवासः कवत्नवे ॥ ऋग्वेद ७/३२/९

भावार्थ- इस मंत्र में उपमालंकार है- जो अन्याय से किसी की हिंसा नहीं करते और धर्मात्माओं की वृद्धि करते हैं वे विद्वान् जन सर्वदा जीतते, धर्म में निवास करते और पुष्ट होते हैं। (ऋषि दयानन्द कृत भाष्य)

मानव-जीवन के साथ ही दैवी और आसुरी वृत्तियों का संघर्ष सर्गारम्भ से चला आ रहा है। जीवन-संग्राम में आसुरी वृत्तियों के विजयी होने पर क्लेशों का समुद्र उमड़ पड़ता है और ये क्लेश मानव को काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या-द्वेष, अहंकार आदि विविध रूपों में व्यथित करते हैं। इनके वशीभूत होकर मनुष्य जब अन्य प्राणियों को कष्ट देने के लिए सन्नद्ध होता है तो उस वृत्ति का नाम है 'हिंसा'। परन्तु साधक जब आसुरी वृत्तियों की प्रबल विरोधिनी सेनाओं के द्वारा दैवी वृत्तियों को विजयी बना लेता है तो दैवी वृत्तियों के विशाल साम्राज्य में सात्त्विकता, शान्ति, श्रद्धा, प्रेम, उत्साह आदि आध्यात्मिक सुखद राज्यों की स्वतः स्थापना हो जाती है। इन्हीं दैवी वृत्तियों की जननी एवं पोषिका वृत्ति का नाम है 'अहिंसा'।

आसुरी=हिंसात्मक वृत्तियाँ साधक को विविध कष्टों से दुःखित करने के साथ ही आध्यात्म-प्रसाद से वंचित रखती हैं, अतः श्रुति भगवती साधक को कल्याण-भावना से शिक्षा देती है कि- **'सोमस्वरूप परमेश्वर को चाहने वाले साधको! तुम किसी की हिंसा मत करो**। हिंसा न करने का हेतु बताते हुए आगे कहा, **'क्योंकि हिंसक वृत्तिवाला व्यक्ति मोक्षरूपी अनुभव सम्पदा को कदापि पा नहीं सकता**।

न स्रेधन्तं रयिर्नशत् । - साम. ८६८; ऋग् ७/३२/२१

इसके विपरीत जो अन्याय-अनीति से स्वार्थवश किसी की हिंसा नहीं करते, वही धर्मात्मा, शक्तिशाली होकर निर्भयता से विजय पाते हैं-

तरणिरिज्जयति क्षेति पुष्यति न देवासः कवत्नवे ॥ - ऋग्. ७/३२/९

अतः वेद का सन्देश है कि- 'योगाभिलाषी उपासक अहिंसा का पालन करें, अन्य राजपुरुष आदि उनकी रक्षा करते हुए अहिंसा-वृत्ति का आचरण करें-

मा हिꣳसीः पुरुषं जगत् । -यजु. १६/३

हिंसा का निषेध-

वेदों में हिंसा न करने तथा अहिंसा का परिपालन करने के विषय को अतिसूक्ष्मता एवं व्यापकता से प्रस्तुत किया गया है। साधना के लिए उद्यत साधक जब गम्भीरता से दृष्टिपात करता है तो उसे सारा प्राणि-जगत् हिंसा से परिपूर्ण, जीव जीव का घातक दिखाई देता है। ऐसी स्थिति में जीव, जीव का भोजन बना हुआ है, सबल निर्बल को खा रहा है, पीड़ा दे रहा है, दुःखित कर रहा है। ये दुःखित करने की भावनाएँ गुण-कर्म तथा स्वभाव में बस चुकी हैं। इनसे मानव स्वयं दुःखी है और दूसरों को भी कष्ट देने के लिए तैयार रहता है। इस अवस्था में सुख कहाँ? साधक यह विचारकर सर्वप्रथम इन 'दुरितों' को दूर करने को प्रार्थनाएँ करता है कि- 'हे सविता देव! हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कीजिए-

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । - ऋग्. ५/८२/५; यजु. ३०/३

हे इन्द्र! हिंसा करानेवाले काम, क्रोध, द्वेषादि के अधीन हमें न होने दीजिए-

मा न इन्द्र पीयत्नवे मा शर्धते परादाः। -साम. १८०६

द्वेष की भावना ही सब प्रकार की हिंसा की मूल है, इसके विनष्ट हुए बिना साधक आगे बढ़ नहीं सकता, इसलिए विनम्र हो पुनः निवेदन करता है- 'प्रभो! आप सम्पूर्ण द्वेषयुक्त कर्मों को हमसे पृथक् कर दीजिए-

विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् । -ऋग्. ४/१/४

हिंसा से पृथक् रहने की अवस्था तभी आती है जब मनुष्य हिंसा के दुष्परिणामों को भली-भाँति जान लेता है। पहले अज्ञान, कुसंगवश दुष्कर्मों में फँस जाता है, पुनः उनसे छुटकारा पाना कठिन समझकर परमेश्वर से विनय करता है, साथ ही लोक में अपने वरिष्ठ विद्वानों से प्रार्थना करता है कि 'विद्वान् पुरुषों! अत्याचार करनेवाले, दान न देनेवाले तथा दुःख देनेवाले द्वेषभावों को हमसे

www.thearyasamaj.org

दूर करके कल्याण का मार्ग प्रशस्त करो।

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरुणः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥ -ऋग् १०/६३/१२

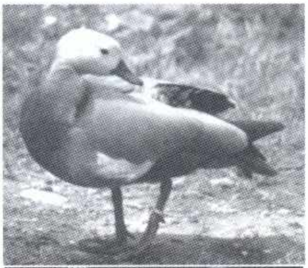

हिंसा करना तो दूर रहा, वैदिक साधक तो हिंसक का संसर्ग भी नहीं चाहता। उसकी सदा यह भावना रहती है कि 'जैसे विद्वान् लोग हिंसारहित मित्र के घर जाते रहते हैं उन्हीं का अनुसरण मैं करूँ।-

यन्नूनमस्यायां गतिं मित्रस्य यायां पथा।
अस्यप्रियस्य शर्मण्य हिंसानस्य सश्चिरे ॥ -ऋग् ५/६४/३

१. द्वेष ही हिंसा का जनक है, **द्वेषी व्यक्ति योगमार्ग में अग्रसर नहीं हो सकता। अद्वेषी होना योगी की प्रथम पहचान है।** वेद का दृढ़ सिद्धान्त है कि 'अद्वेषी ही परमात्मप्रसाद को पा सकता है- *अद्वेषो हस्तयोर्दधे।* -ऋग् १/२४/४

२. अतः वेदों में द्वेषयुक्त कर्म न करने तथा द्वेष-त्याग की भावना से ओत-प्रोत अनेक ऋचा मिलती हैं- द्रष्टव्य -ऋग् ५/८७/८; ६/१०/७

ऐश्वर्याभिलाषी साधक! मोह, क्रोध, मत्सर, काम, मद एवं लोभ इन छह राक्षसी वृत्तियों को कमशः उल्लू, भेड़िया, कुत्ता, कोक=चकवा या कबूतर, गरुड़ और गिद्ध की दुर्वृत्तियोंवाला जानकर पत्थर से पीसने के समान समूल मसल दे-

उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृशदेव प्रमृण रक्ष इन्द्र ॥ ऋग् ७/१०४/२२; अथ. ८/४/२२

अर्थात् आगे से, पीछे से, नीचे से, ऊपर से, सब ओर से ऐसे राक्षसी भावों को सर्वथा समाप्त कर दे-

प्राक्तो अपाक्तो अधरादुदक्तोऽभि जहि रक्षसः पर्वतेन। -अथ. ८/४/१६

हिंसा से बचने के उपाय-

वैदिक संहिताओं में हिंसा एवं अहिंसा विषय के विधि और निषेध परक मन्त्र मिलते हैं। वेद के रहस्यमय गूढ़ तत्त्वों को विद्वान् योगी ही भली-भाँति हृदयंगम कर सकता है। वैदिक अहिंसा के मूल में सदा प्राणियों के अवैध व्याघात का अभाव, जन-कल्याण की भावना तथा ईश्वरीय न्याय-व्यवस्था विद्यमान है। वेद का संकेत है कि- 'ऐसा साधक, ईश्वर के सर्वोपकारक मार्ग से कभी पृथक् न हो। हिंसारहित श्रेष्ठकर्म योगयज्ञ का अनुष्ठान करता रहे तथा अपने अन्दर शत्रुता की भावनाओं को तथा दान न देने की भावनाओं को ठहरने न दे-

मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः। मान्तः स्थुर्नो अरातयः। -ऋग् १०/५७/१

राजा तथा राजपुरुषों का कर्तव्य है कि अहिंसा-व्रतसेवी योगी पुरुषों की सब प्रकार से रक्षा करें। यदि कोई नराधम उसे कष्ट दे, तो राजा उसे विविध कष्ट दे, संतप्त करे- *तपतं रक्ष उब्जतं।* -अथ. ७/४/१

उससे प्रेम न करे- *ब्रह्मद्विषे...द्वेषो धत्तम्।* -अथ. ७/४/२

उसकी अधोगति कर दे- *स वैरिर्दशभिर्वियूया।* -अथ. ७/४/१५

पुनरपि वह अपने स्वभाव को नहीं त्यागे तो देश से बाहर निकाल दे- *भिन्दन्त्सत एतु रक्षसः।* -अथ. ७/४/२१

या मार दे- *हन्ति रक्षो हन्त्यासद्।* -अथ. ७/४/१३ क्रमशः ....

- डॉ. योगेन्द्र पुरुषार्थी

कर्मयोगी महाशय धर्मपाल
अध्यक्ष - न्यास

परमार्थ भाव और परोपकार,
की महिमा है अपार।
गले लगाता सारा जग और,
स्वप्न होते हैं साकार ॥
सत्यार्थ सौरभ
घर-घर पहुँचावें

सत्यार्थप्रकाश मानक संस्करण की कतिपय विशेषताएँ-
- धर्मार्य सभा के प्रधान आचार्य विशुद्धानन्द जी मिश्र के नेतृत्व में दस विद्वानों की समिति द्वारा तैयार।
- पाठभेद की समस्या का सदैव के लिए निराकरण। मुद्रण भूलों का निराकरण कर परिशिष्ट में आधार की जानकारी भी।
- मानक संस्करण का प्रत्येक पृष्ठ उसी शब्द से प्रारम्भ व समाप्त है जैसा कि मूल सत्यार्थ प्रकाश (१८८४) में है।
- मूल सत्यार्थ प्रकाश (१८८४) सदैव के लिए पाठक के समक्ष उपस्थित रहेगा।
- सुन्दर गेटअप "५.६X९.०" पृष्ठ ६५०, वजन ६०० ग्राम, पेपर बैक।

घाटे की पूर्ति पूर्ववत् दानदाताओं के सहयोग से ही संभव होगी।
आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि सत्यार्थ प्रकाश प्रेमी इस कार्य में आगे आवेंगे।

अब मात्र आधी कीमत में
₹ ४०
३५०० रु. सैंकड़ा
शीघ्र मंगवाएँ

www.thearyasamaj.org

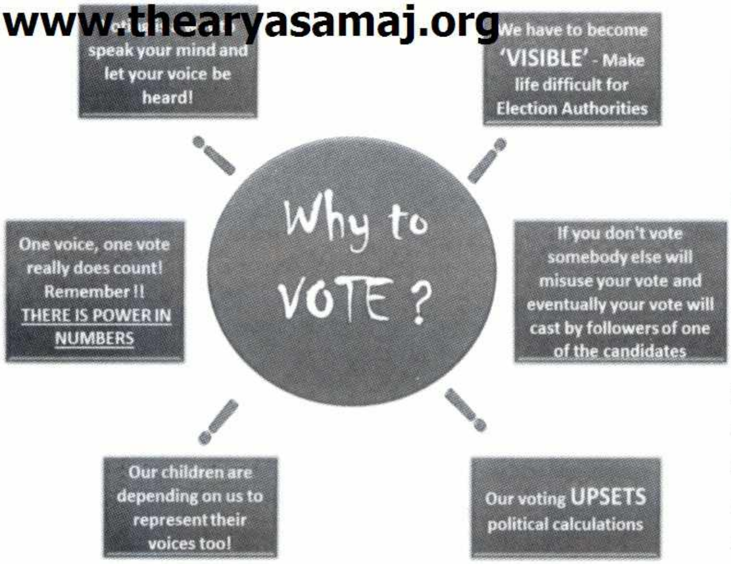

मत चूके चौहान

आत्म निवेदन

आज पूरा देश संत्रस्त है। निजी स्वार्थों की प्रतिपूर्ति के अतिरिक्त राज्य प्रत्येक करणीय कर्त्तव्य के क्रियान्वयन में पूर्णतः विफल है।

त्यं चिदित्था कत्पयं शयानमसूर्ये तमसि वावृधानम्।
तं चिन्मन्दानो वृषभः सुतस्योच्चैरिन्द्रो अपगूर्या जघान॥
बृहस्पते परि दीया रथेन रक्षोहामित्राँ अपबाधमानः।
प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेद्ध्यविता रथानम्॥

ऋग्वेद ५/३२/६ तथा यजुर्वेद १७/३६- इन उपरोक्त मंत्रों का भाष्य करते हुए महर्षि दयानन्द राज्य के प्राथमिक कर्तव्यों को रेखांकित करते हुए लिखते हैं-

'जैसे सूर्य के द्वारा अन्धकार का निवारण करके मेघ का हनन किया जाता है, वैसे ही **राजा के द्वारा दुष्टों का नाश और श्रेष्ठों का पालन किया जाना चाहिए।**' 'राजा और सेनापति अपनी सेना को बढ़ाते हुए तथा **शत्रु सेना को नष्ट करते हुए धार्मिक प्रजा को निरन्तर उन्नत करें।**' इस प्रकार बाह्य शत्रुओं से रक्षा तथा प्रजा के जान, माल तथा प्रतिष्ठा की रक्षा करना राजा का प्राथमिक दायित्व है।

पाकिस्तान, चीन द्वारा हमारी सीमाओं पर दिन-प्रतिदिन जिस प्रकार आक्रमण किये जा रहे हैं और उस ओर भारत सरकार का जो रवैया है वह सभी के सम्मुख है। प्रजा की रक्षा का जहाँ तक प्रश्न है जिस देश में ४-५ वर्ष की मासूम बालिकाओं की अस्मिता और प्राण सुरक्षित नहीं हैं, उस देश के शासकों को चुल्लू भर पानी में डूब मरने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। पर यह तो तब हो जब कुछ शर्म बाकी बची हो। परन्तु हमारे शासकों की बेशर्मी तथा स्वार्थपरता ने तो सभी सीमाओं को लॉघ लिया है। शासन तंत्र भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबा है। आज का शासन अपने प्राथमिक कर्त्तव्यों के निर्वहन में पूर्णतः अक्षम है।

पहले घोटालों की राशि के आगे जो शून्य लगती थीं वह गिनने योग्य होती थीं। आज के घोटालों की राशि इतनी ज्यादा है कि उसकी शून्यों को कम से कम हम तो गिनने में तकलीफ महसूस करते हैं। भ्रष्टाचार से अर्जित राशि तथा विदेशों में जमा काले धन को recover कर लिया जाय तो देश की अर्थव्यवस्था पटरी पर आ जाय। परन्तु यह सब शासनतंत्र के चरित्र पर निर्भर करता है। अन्यथा यह राशि भी लोक-कल्याण में नहीं निजी कल्याण में साधक बनेगी।

आज स्थिति अतीव निराशाजनक है। लाखों करोड़ों रुपये के कोयला घोटाले की जाँच में ऑच प्रधानमंत्री तक पहुँच रही है। उच्चतम न्यायालय चाहता है कि इसकी निष्पक्ष जाँच हो, पर कैसे? इस मामले से संबंधित फाइलें ही गुम कर दी गयीं। अब कर लीजिए जाँच? अभी एक चैनल की सूचना के अनुसार इन गुम फाइलों में से कुछ, राँची में कूड़ेदान में पायी गयीं हैं। और फाइलें ही क्यों जिन्होंने पूरे देश को कूड़ेदान में डाल रखा है उस शासक वर्ग का बेशर्म बयान है कि इस बारे में वे कुछ नहीं जानते हैं। निराशाजनक माहौल में केवल न्यायालय ही अपनी चमक कभी-कभी दिखा रहा है। अभी हाल में आया निर्णय कि लोकसेवक नेताओं के मौखिक आदेश को न मानें तथा लोकसेवकों के ट्रान्सफर की सिफारिश पर नेतागण कारण लिखें, स्वागत योग्य है। अपने निज के राजकीय सेवा के अनुभव के आधार पर हम कह सकते हैं कि उक्त दोनों निर्देशों की यदि पालना होती है तो बैचेनी महसूस कर रहे ईमानदार अधिकारी स्वतंत्रता से अपना कार्य कर सकेंगे। स्थानान्तरण की सुविचारित प्रणाली विकसित हो जाय तथा नेताओं की मनमर्जी से अकारण होने वाले स्थानान्तरणों पर रोक लग जाय तो अप्रत्याशित शुभ परिणाम सामने आ सकते हैं। इस संदर्भ में निर्वाचनों से पूर्व थोक संख्या में उच्चाधिकारियों के ट्रान्सफर तथा अशोक खेमका जैसे अधिकारियों का ४० बार स्थानान्तरण ध्यातव्य है। दुर्गाशक्ति नागपाल के संदर्भ में आखिर एक राजनेता ने ही तो कहा था कि चन्द मिनिटों में हमने निलम्बित करवा दिया।

प्रजातंत्र में भ्रष्टाचार के अनेक रूप होते हैं। किसी वर्ग-विशेष को विशेष सुविधा देना अथवा देने का वायदा कर वोट बैंक के रूप में प्रयुक्त करना सबसे बड़ा राजनीतिक भ्रष्टाचार है। जातिगत वोट-बैंक की उपस्थिति सर्वविदित है। सभी दल प्रत्याशी की योग्यता व ईमानदारी को देख कर नहीं, इसी जाति वोट-बैंक को ध्यान में रख प्रत्याशी खड़ा करते हैं। अल्पसंख्यकों को वोट-बैंक बनाना यह

www.thearyasamaj.org

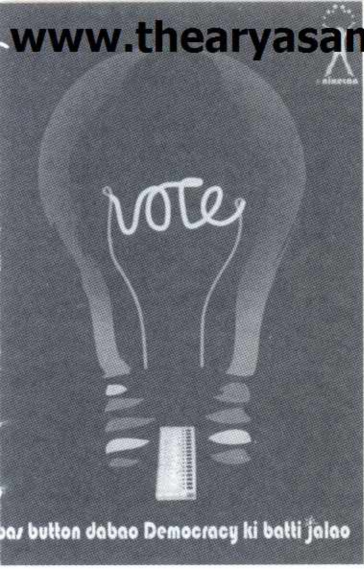

आज तक का राजनीतिक दलों का प्रिय हथियार रहा है। इससे शायद ही कोई दल बचा हो। आरक्षण का वर्त्तमान स्वरूप तथा अल्पसंख्यकों का तुष्टिकरण भ्रष्टाचार का ही एक ऐसा रूप है जो 'विपन्नों के उत्थान' के लोक लुभावन पैकेज में प्रस्तुत किए जाने के कारण, तथा केवल इसी कारण थोक में वोट मिलने के इतिहास के कारण इस तंत्र में पूर्णरूपेण स्थापित हो चुका है।

प्रत्येक राजनेता उक्त तथ्य के चलते कितना विवश है इसका इससे अच्छा क्या उदाहरण होगा कि सम्पूर्ण शासनतंत्र को पूर्णरूपेण बदल कर स्वच्छ सुशासन देने का वायदा कर मैदान में कूदे अरविन्द केजरीवाल भी इस थोक वोट बैंक के लोभ का संवरण न कर सके। एक विस्तृत आश्वासनात्मक पत्र मुस्लिम समुदाय को उन्होंने लिखा है। उसमें, उनके अनुसार, जो वायदे किए हैं वे जायज हैं, अल्पसंख्यक समुदाय के उत्थान की बात है परन्तु हमारा कहना है कि यह आश्वासन तो भारत की सम्पूर्ण जनता के लिए होना चाहिए, वर्ग विशेष को पृथक् से क्यों? स्पष्ट है कि इस थोक बैंक की आपको भी आवश्यकता जान पड़ी। राजनीतिक भ्रष्टाचार की फिसलन भरी पट्टी पर यह केजरीवाल की प्रथम फिसलन है। आगे वे औरों का अनुसरण नहीं करेंगे इसकी कोई गारण्टी नहीं।

वस्तुतः शासक तथा प्रजा की जितेन्द्रियता ही भारत की धवल कीर्ति की जामिन है। महर्षि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश में स्पष्ट लिखते हैं कि **'जब मनुष्य धार्मिक रहते है तभी तक राज्य बढ़ता रहता है और जब दुष्टाचारी होते हैं, तब नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है।'** आज ठीक यही स्थिति है। आज राष्ट्र को एक समग्र क्रान्ति की आवश्यकता है। ऐसी क्रान्ति को असम्भव मान जो भी प्रयास होंगे उससे पूर्ण इच्छित परिणाम नहीं मिल सकता। गौरवशाली, मूल्याधारित भारतीय संस्कृति ऐसे प्रतिनिधियों द्वारा कैसे अभिव्यक्त होगी जो रुपयों के अलावा मुलायम गोश्त भी रिश्वत में शिद्दत से चाहते हैं? विधान-मन्दिरों में बैठ पोर्न फिल्में देखते हैं। तथाकथित गुरुओं के समक्ष लाइन में खड़े हो अपने फोलोअर्स को भी अन्धविश्वास की गहरी खाई में धकेल देते हैं। ऐसे नेताओं से दुराचार-निवारण की आशा करना ही व्यर्थ हैं।

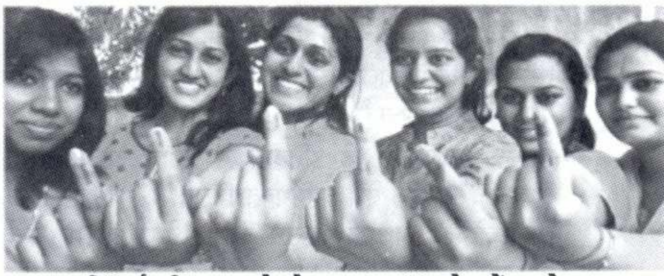

इन सब परिस्थितियों में जनता ठगी व किंकर्त्तव्यविमूढ़ खड़ी है। परन्तु इस किंकर्त्तव्यविमूढ़ता को ठोकर मार समर-क्षेत्र में कूदने का समय आ गया है। **पाँच वर्ष में एक बार आपको मौका मिलता है कि देश की किस्मत को आप योग्य हाथों में सौंपे।** पर आपके प्रमाद व निष्क्रियता के कारण सुयोग्य सच्चरित्र प्रतिनिधि शासन का हिस्सा नहीं बन पाते। आज के प्रतिनिधित्व की गणित देखें। अमूमन ६०% मतदान हम मान लें। इसमें से भी कई उम्मीदवारों के होने के कारण अमूमन ३०-३२ प्रतिशत वोट पाने वाला प्रत्याशी विजित हो जाता है। इस प्रकार ७०% लोगों द्वारा नकारा गया प्रत्याशी शासन का हिस्सा बन जाता है। **इस स्थिति का निराकरण केवल शत-प्रतिशत मतदान द्वारा संभव है। ईमानदार, सेवाभावी, किसी भी प्रकार की गुटबन्दी से दूर सबका हित चाहने वाले, भारतीय अस्मिता में विश्वास रखने वाले, भारतीय गौरवशाली संस्कृति के प्रति अनुरक्त प्रत्याशियों को विजित बनाइए।**

अगर आप मतदान के पवित्र कर्त्तव्य का प्रयोग प्रमादवश अथवा किसी भी अन्य कारण से नहीं करते हैं तो फिर आपको किसी को कोसने का अधिकार भी नहीं है।

याद रखें पृथ्वीराज चौहान ने १७ बार गलती करने के बाद १८वीं बार 'मत चूके चौहान' सुनते ही आततायी का अन्त करने में सफलता प्राप्त की थी, उसी का अनुसरण आज हम सबको करने की आवश्यकता है।

अशोक आर्य
०९००१३३९८३६, ०९३१४२३५१०१

□□□

दल-दल में सब दल खड़े, बची नहीं पहचान।
कीचड़ से ही खेलते, दाग बने हैं शान।।
हर दल में ही पल रही, वंशवाद की बेल।
कीचड़ फैंकीं और पर, खुद पर अब तू झेल।।
हुंकार से पहले मचा, कैसा हाहाकार।
जिसने भी किए धमाके, उनको है धिक्कार।।
इन धमाकों ने खोली, सुशासन की पोल।
बड़े-बड़े दावे सभी, हुए हवा में गोल।।
सत्ता सुख की चाह में, अब मिल बैठे साथ।
चाहे विचार ना मिलें, डाले हाथ में हाथ।।
हाथ मिले पर दिल नहीं, मोर्चा ना बना पाये।
सत्ता पर सबका दावा, साथ नहीं रह पाये।।

नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

www.thearyasamaj.org

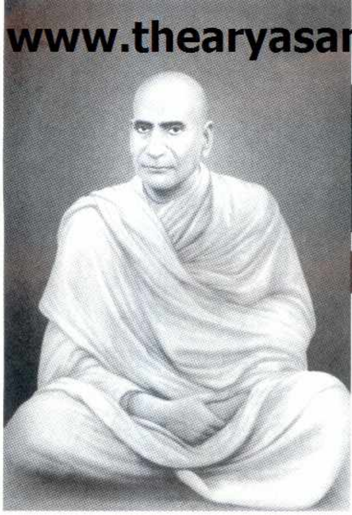

सत्यार्थ-शिक्षाओं को जीवन में उतारने वाले संन्यासी

'सत्यार्थदूत' सरोज आर्या

महर्षि दयानन्द जीवनपर्यन्त देश का भ्रमण कर अपने उपदेशों, शास्त्रार्थ, लेखन एवं अन्य सभी न्यायोचित साधनों से वैदिक धर्म के पुनरुद्धार हेतु संघर्ष पूर्ण प्रयत्न करते रहे। उन्होंने अपने मन्तव्यों और सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार हेतु प्रथम आर्यसमाज की स्थापना मुम्बई नगर में चैत्र सुदि प्रतिपदा संवत् १९३२ वि. तदनुसार ७ अप्रैल सन् १८७५ ई. को की थी। आज आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार देश विदेशों में है। महर्षि द्वारा स्थापित सिद्धान्तों और मन्तव्यों की चर्चा व प्रचार-प्रसार हेतु साप्ताहिक अधिवेशन, वार्षिक उत्सव एवं आर्यपर्व बड़े ही धूमधाम से मनाये जाते हैं। लेकिन उनके मन्तव्यों एवं सिद्धान्तों को क्रियात्मकरूप से जीवन में धारण करने का प्रयास कम ही होता है।

लेकिन आर्यसमाज के इतिहास में महान् आत्मा स्वामी श्रद्धानन्द ही एक ऐसे ऋषिभक्त मिलते हैं, जिन्होंने उनके सिद्धान्तों का अक्षरशः पालन किया। वे महर्षि के सच्चे अनुयायी थे, उन पर उनकी अगाध श्रद्धा एवं दृढ़ विश्वास था, उनके आदेशों पर चलना अपना परमधर्म समझते थे। वे जीवनपर्यन्त ऋषि के स्वप्नों को साकार करने में लगे रहे। यही कारण है कि महर्षि के मन्तव्यों और सिद्धान्तों का जितना प्रचार-प्रसार अकेले स्वामी श्रद्धानन्द ने किया उनके पश्चात् सम्पूर्ण आर्यजाति मिलकर भी न कर सकी।

जीवन परिचय- स्वामी श्रद्धानन्द का जन्म सन् १८५६ ई. को पंजाब प्रान्त के जालन्धर जिले के तलबन ग्राम में हुआ था। इनके जन्म का नाम बृहस्पति एवं घर का नाम मुंशीराम था। बनारस में सन् १८६६ में उनकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। आपको नास्तिकता के विचारों ने उस समय आ घेरा जब उन्हें विश्वनाथ मंदिर में इसलिये नहीं जाने दिया गया क्योंकि वहाँ रीवा की रानी पूजा कर रही थी। ईश्वर के दरबार में अमीर गरीब का यह भेदभाव देखकर उनके कोमल मन को ठेस लगी। वे नित्य प्रातः गंगा-स्नान को जाते थे एक दिन एक अबला नारी का सतीत्व एक पण्डे द्वारा लुटते देखकर उन्हें हिन्दू जाति से घृणा हो गई। उन्हें यह सब ढ़ोंग, ढकोसला और पाखण्ड लगने लगा। कॉलेज की शिक्षा प्राप्त करते समय ईसाइयों के संसर्ग में आकर वे ईसाई धर्म को स्वीकार करने ही वाले थे कि एक दिन उस पादरी को एक नन के साथ अश्लील अवस्था में देखकर उन्हें ईसाई धर्म से घृणा हो गई और वे पूर्ण नास्तिक हो गये। उनका बड़े बड़े अमीर पुत्रों के साथ उठना बैठना था, उनकी संगत से उनमें मद्य-मांस का सेवन व आचारहीनता के दोष आ गये। वे पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होने लगे थे।

सौभाग्य से सन् १८७९ में जब इनके पिता श्री नानक चन्द जी बरेली में अंग्रेजी सरकार के पुलिस विभाग में कोतवाल थे तो वहाँ युगप्रवर्त्तक, वेदोद्धारक, अखण्ड ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द का आगमन हुआ। उनके प्रवचन के प्रबन्ध का भार इनके पिता पर पड़ा, वे महर्षि के प्रवचनों से प्रभावित हुए। अतः इन्होंने अपने पुत्र को भी साथ चलने को कहा, लेकिन पहले तो मुंशीराम ने यह कहकर टाल दिया कि वह निरा संस्कृत पढ़ा साधु मुझे क्या शिक्षा देगा। किन्तु फिर पिता के आग्रह से उनके साथ गये लेकिन वहाँ महर्षि के अत्यन्त तेजोमय मुखमंडल, ब्रह्मचर्य से ओतप्रोत सुडौल शरीर व ओजपूर्ण वाणी से, पण्डित्यपूर्ण उच्चारण तथा नगर के संभ्रान्त व्यक्तियों और अंग्रेज अधिकारियों के सम्मुख निडर होकर वैदिक धर्म पर युक्तियुक्त प्रवचन से वे प्रभावित हुए बिना न रह सके। प्रवचन के अन्त में शंका समाधान भी किया, महर्षि से युक्तियुक्त उत्तर सुनकर वे महर्षि की ओर झुके।

लाहौर में वे ब्रह्मसमाज के सम्पर्क में आये, उनके भ्रामक विचारों से भ्रमित व खिन्न होकर वे भटक ही रहे थे कि उनका सम्पर्क आर्यसमाज के नेता लाला साईदास से हुआ, जिन्होंने इन्हें महर्षिकृत सत्यार्थप्रकाश पढ़ने को दिया। जिसके अध्ययन से उनकी काया ही पलट हो गई और सन् १८८४ ई. को वे विधिवत् आर्यसमाज में प्रविष्ट हुये। उस घटना को लाला साईंदास ने आर्यसमाज में एक नई शक्ति का प्रवेश बताया जो आगे चलकर अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई।

सत्यार्थप्रकाश का प्रभाव - इसके पश्चात् तो सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन द्वारा महर्षि के आदर्शों का अनुशीलन करते गये, वैसे ही वे उन्हें अपने जीवन में धारण करते गये और ऋषि के स्वप्नों को साकार करने में लग गये। **सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम एवं सातवें समुल्लास** में ईश्वर विषयक लेख

www.thearyasamaj.org

पढ़कर वे कट्टर नास्तिक से पूर्ण आस्तिक बन गये तथा ईश्वर के प्रति श्रद्धा दिन प्रति दिन बढ़ने लगी।

सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे व तीसरे समुल्लास में शिक्षा सम्बन्धी व स्त्री सम्बन्धी विचार पढ़े। उनकी बड़ी पुत्री वेदकुमारी ईसाइयों के विद्यालय में पढ़ने जाती थी। एक दिन उसको गाते सुना कि 'ईसा-ईसा बोल, तेरा क्या लगेगा मोल। ईसा मेरा राम रमैया, ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया।' उसी दिन उन्होंने निश्चय किया कि अपना कन्या विद्यालय होना चाहिए और सर्वप्रथम जालंधर में आर्य कन्या विद्यालय स्थापित किया। यद्यपि इसके लिये उन्होंने कड़ा विरोध भी झेला लेकिन वे अपने विचारों पर दृढ़ रहे। शीघ्र ही यह विद्यालय कन्या महाविद्यालय में पदोन्नत होकर कन्या शिक्षा हेतु प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ। महर्षि की गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली को मूर्त्तरूप देने के लिए आपने अपना धन-सम्पत्ति, संतान सबकुछ समर्पित कर दिया। आज वही गुरुकुल विश्वविद्यालय के रूप मे प्रसिद्धि को प्राप्त हो रहा है। स्वामी जी ने अछूतों के उद्धार हेतु दलितोद्धार सभा की स्थापना की व अस्पृश्यता निवारण का काम किया।

चौथे समुल्लास में गृहस्थाश्रम के विषय में पढ़ा कि नारी का सम्मान करना चाहिए। उन्हें अपनी पत्नी शिवदेवी के साथ किये गये उपेक्षापूर्ण व्यवहार से बड़ी ग्लानि हुई। अपनी गलती को स्वीकार कर वे उनको गृहलक्ष्मी मानने लगे और उनसे प्रेम कर उनका सम्मान करने लगे। फिर तो उनसे इतना प्रगाढ़ प्रेम हो गया कि उनकी मृत्यु के पश्चात् भी उन्होंने दूसरा विवाह करना स्वीकार नहीं किया।

पाँचवें समुल्लास के अनुसरण में आपने वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश किया और सर्वकालीक आर्यसमाज के प्रचारक हो गये। सन् १९१७ को पूर्ण परिव्राजक बन श्रद्धानन्द नाम रखा और दिल्ली रहकर आर्यसमाज का कार्य करने लगे। गुरुकुल भी पंडित रामदेव जी को सम्भला दिया। दसवें समुल्लास के अनुसरण में आपने सदा-सदा के लिये मद्य-मांस को तिलांजलि दे दी और सात्त्विक जीवन व्यतीत करने लगे।

महर्षि के सिद्धान्तों का प्रभाव- आपने वकालत पास की थी, सुकेत रियासत के एक मुकदमे में विजय प्राप्ति से उनकी बड़ी प्रसिद्धि हुई और वकालत खूब चल निकली। किन्तु **आर्यसमाज के सातवें नियम**- 'सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए' और **चौथा नियम**- 'सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए' का अनुसरण करते हुए एक सेठ के मुकदमे के फैसले के दिन उन्हें सच्चाई का पता चला कि सेठ वास्तव में दोषी है, तो उन्होंने फैसले से पूर्व भरी अदालत में सत्य बात बता दी व झूठ की वकालत करने की क्षमा माँगी। इससे वे मुकदमा तो हार ही गये उनकी बदनामी भी खूब हुई। लेकिन वे इससे बिल्कुल भी विचलित नहीं हुए और बाद में भी आपने वकालत करते हुए कभी असत्य का आश्रय नहीं लिया। वास्तव में वे महर्षि के समान ही सत्य के पुजारी थे।

महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र के अध्ययन से आपको ज्ञात हुआ कि सम्पन्न परिवार के होते हुए भी उन्होंने जीवन की समस्त सुख-सुविधाओं को त्याग कर हजारों कष्ट सहते हुए वैदिक धर्म का प्रचार किया और अन्त में अपना जीवन बलिदान कर दिया। महर्षि के जीवन से प्रेरणा प्राप्त करते हुए आपने वकालत बन्द कर दी और वैदिक धर्म और आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार में जुट गये। प्रचार को गति प्रदान करने के लिए आपने **'सद्धर्म प्रचारक'** पत्र निकालना प्रारम्भ किया।

आर्यसमाज को संगठित करने के प्रयास- आर्यसमाज के संगठन को सार्वभौम सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए आपने सन् १८९२ मे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की स्थापना की और सन् १९०८ में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना की। इन्हीं दिनों पटियाला राज्य में आर्यसमाज के सदस्यों को देशद्रोही मानकर परेशान किया जाने लगा, आप तत्काल वहाँ गये व आन्दोलन कर उन यातनाओं को बन्द करवाया। जहाँ-जहाँ भी आर्यसमाज पर विपत्ति आई वे सुदृढ़ ढ़ाल के समान वहाँ पहुँचे व आर्यसमाज पर आँच नहीं आने दी।

हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रयास- स्वामी श्रद्धानन्द हिन्दू मुस्लिम एकता के पक्षधर थे। इसी से प्रभावित होकर आपको देहली की जामा मस्जिद में हिन्दू मुस्लिम एकता पर भाषण देने हेतु आमन्त्रित किया गया। **जामा मस्जिद की उस ऐतिहासिक वेदी पर चढ़ने के लिए मुगल बादशाह तक तरसते रहे, लेकिन यह सम्मान मानवता के पुजारी आर्य संन्यासी श्रद्धानन्द को मिला, जिन्होंने उस वेदी से वेद मंत्रों से प्रारम्भ कर भाषण दिया।** इसके बाद उन्होंने फतेहपुरी मस्जिद में भी जनता को सम्बोधित किया। उनकी मान्यता थी कि हिन्दू मुस्लिम एकता के द्वारा ही राष्ट्रीय एकता और स्वाधीनता को प्राप्त किया जा सकता है।

उन्होंने हिन्दुओं को संगठित करने के लिए सन् १९२३ को 'हिन्दू महासभा' की स्थापना की। इसी वर्ष आपने 'शुद्धिसभा' की स्थापना की व बुलन्दशहर के आसपास लाखों मलकाने मुसलमान राजपूतों को शुद्ध कर आर्य

www.thearyasamaj.org

बनाया। उन्होंने हिन्दू संगठन, शुद्धि व अछूतोद्धार के अपने समस्त अभियान में कभी भी मुसलमानों के प्रति हिन्दुओं में घृणा नहीं फैलाई। उन्होंने सकारात्मक दृष्टि रखते हुए अपने लक्ष्य की ओर कदम बढ़ाया लेकिन साम्प्रदायिक घृणा, हिंसा और द्वेष जैसे नकारात्मक मूल्यों को कभी भी पनपने नहीं दिया।

अपनी सम्पूर्ण सहृदयता व सहिष्णुता के बावजूद भी वे उनकी सूची में शत्रु नम्बर एक माने जाने लगे थे। सन् १९२६ को उन्होंने असगरी बेगम नामक मुस्लिम महिला को शुद्ध कर 'शांति' नाम रक्खा। इससे तो मुसलमानों में एक जनून सवार हो गया और वे उनके प्राणों के प्यासे बन गये। २३ दिसम्बर १९२६ को मतान्ध अब्दुल रशीद नामक एक व्यक्ति ने उन्हें गोली मार दी। असहिष्णु, कट्टर और धर्मान्ध साम्प्रदायिकता ने एक महान् संन्यासी की बलि ले ली।

स्वामी श्रद्धानन्द आर्यसमाज ही नहीं भारत के उन महान् राष्ट्रभक्त संन्यासियों में से एक थे, जिनका सम्पूर्ण जीवन महर्षि के चरणों में अर्पित था। उनके प्रति अटूट विश्वास एवं अनन्य श्रद्धा का ही परिणाम था कि उन्होंने अपना जीवन स्वाधीनता, स्वराज्य, शिक्षा और वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु समर्पित कर दिया। वे अपनी श्रद्धा व अपने अमर कार्य के लिए सदा सदा अमर रहेंगे।

हमने श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी को अपनी श्रद्धांजलि उनके चित्र को अपने घरों में या आर्यसमाजों में टाँगने, उनके नामों के जयकारे लगाने, प्रतिवर्ष उनके बलिदान दिवस पर बड़े आयोजन कर उनकी प्रशंसा में अपने विचार प्रकट करने आदि तक ही सीमित कर दिया है। लेकिन उनके समान महर्षि के सिद्धान्तों एवं मन्तव्यों को पूर्ण करने की कोई प्रतिज्ञा नहीं करता है। अतः यदि आर्यसमाज अथवा आर्यजगत् श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी को अपनी सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित करना चाहता है तो उनके बलिदान दिवस पर उनके आदर्शों को अपने जीवन में धारण करने की प्रतिज्ञा लेनी होगी, तभी उनका बलिदान दिवस मनाना सार्थक है।

किशनपोल आर्यसमाज जयपुर, राजस्थान

वर्तमान ग्राहकों के लिए रियायती योजना

आपकी सदस्यता को यदि आप पंचवर्षीय सदस्यता में परिवर्तित करते हैं तो चार सौ की बजाय केवल तीन सौ रु. भेज दें तो आपको पंचवर्षीय सदस्य में नामित कर लिया जायेगा। इसी प्रकार अगर आप आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं तो बजाय एक हजार रु. के मात्र नौ सौ रु. प्रेषित करने का श्रम करें तो आपको आजीवन सदस्यता सूची में सम्मिलित कर लिया जायेगा।

बलिदान दिवस पर

राम तुम्हें शत-शत नमन

उन्नीस दिसम्बर सत्ताइस
प्रातः छः बजे धुंधले।
रामप्रसाद बिस्मिल हँसते
हँसते फाँसी पर झूले।।
अंग्रेजी साम्राज्य मिटे', आजाद मुल्क हो सारा।
'भारत माता की जयहो' का गुँजा गुँजा के नारा।।
अंग्रेजों की तानाशाही से थे आग बबूले।
आजादी हित मरने की ख्वाहिश से फूले-फूले।।
उसके ठीक एक दिन पहले, जब माँ मिलने आई।
माँ के अन्तिम दर्शन कर, उनकी आँखें भर आई।।
गरज उठी माँ 'अरे राम! ये अश्रु शर्म नहिं आती।'
'छाती तान देशभक्ति के तेरे, मैं रहती गुण गाती।'
मेरा बेटा हँसते-हँसते फाँसी वरण करेगा।
जिया देश के लिए, देशहित के ही लिए मरेगा।
हतप्रभ होके हाथ, जोड़कर फिर माता बोले।
'माँ खुशियों के अश्रु बिन्दु ये, देश भक्ति दृढ़ घोले।।'
भला वीर माता तुम जैसी, मुझको कहाँ मिलेगी।
जो फाँसी के इक दिन पहले, अश्रु देख डपटेगी।।
यही प्रार्थना है, प्रभु से, मम उठो भाग्य है माता।
पुनर्जन्म में तेरी जैसी मिले वीरवर माता।।
देश, धर्म रक्षार्थ जिऊँ अरु मरूँ देश गुण गाऊँ।
पुनर्जन्म में तेरी जैसी वीर मातुश्री पाऊँ।।
विश्व व्योम में रहे चमकता ये बलिदान तुम्हारा।
ध्रुव तारा बन राम! तुम्हें शत-शत हो नमन हमारा।।

दयाशंकर गोयल
१५५४-डी सुदामा नगर
इन्दौर- ४५२००९ (मध्यप्रदेश)

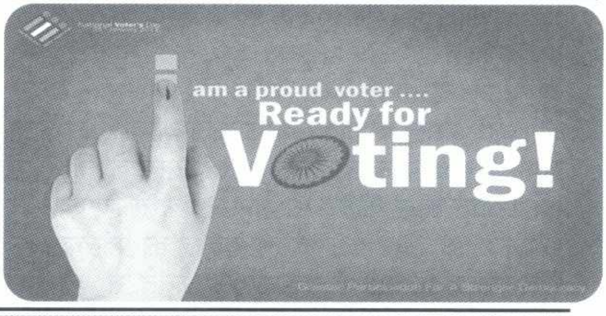

www.thearyasamaj.org

ब्रह्माण्ड की खोज और महर्षि दयानन्द

मनमोहन कुमार आर्य

हमें लगता है कि इस प्रश्न के दो भाग हैं। पहला यह कि यह ब्रह्माण्ड अस्तित्व में कैसे आया? दूसरा कि इस ब्रह्माण्ड के यथार्थ रहस्य को किसने कब व कैसे जाना?हमें लगता है कि पहले प्रश्न का पूरा उत्तर हमारे वैज्ञानिकों के पास नहीं है। उन्होंने जो कल्पनायें की हैं, वह आधी अधूरी व सत्य से विपरीत हैं जिसका कारण कि उनका ईश्वर को न जानना और न मानना है।

इसका उत्तर है कि संसार में दो प्रकार के पदार्थ हैं, एक चेतन व दूसरे जड़ या निर्जीव। चेतन सत्तायें भी दो प्रकार की हैं। इनमें एक, केवल एक, बड़ी सत्ता है जिसे ईश्वर कहते हैं और उससे भिन्न कुछ सूक्ष्म व अनन्त चेतन सत्तायें, जिनकी संख्या जीव या मनुष्य के ज्ञान में अनन्त है, उन्हें जीवात्मा कहते हैं। ईश्वर सहित इन सभी सत्ताओं का ज्ञान जीवात्मा-जीवात्माओं या मनुष्यों को तब तक नहीं हो सकता जब तक कि स्वयं ईश्वर मनुष्य योनि में उन्हें इनका ज्ञान न कराये। ईश्वर के अपने नियम हैं। वह कारण प्रकृति से इस ब्रह्माण्ड की रचना करता है। कारण प्रकृति जड़ है एवं अतिसूक्ष्म है। कारण अवस्था में वह सत्, रज व तम गुणों की साम्यावस्था में होती है। ईश्वर सृष्टि या ब्रह्माण्ड की रचना इसलिए कर पाता है कि वह सत्, चित व आनन्दस्वरूप, निराकार, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान्, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, सृष्टिकर्ता आदि गुणों से युक्त है। इससे पूर्व अनादि काल से उसने असंख्य बार सृष्टि को बनाया है और उसका समय पूरा होने पर प्रलय की है। सृष्टि रचने व प्रलय करने का उसे पूरा-पूरा अनुभव है। ईश्वर में अनन्त गुण, कर्म व स्वभाव हैं। इससे वह सगुण सिद्ध होता है। ईश्वर में जो-जो गुण हैं उनके होने से वह सगुण जाना जाता है और जो-जो गुण नहीं हैं, उनके न होने से वह निर्गुण कहा जाता है। **सगुण होने का अर्थ साकार होना कदापि नही है। इसी प्रकार निर्गुण होने का अर्थ निराकार भी नहीं है।**

पाठक विचार करने पर यह पायेंगे कि ईश्वर के जिन गुणों का उल्लेख किया गया है वह पूर्णतः तर्कसंगत हैं और उन गुणों की सत्यता, प्रमाण व सिद्धि का प्रमाण यह जीता-जागता-साकार ब्रह्माण्ड है जिसे हम अपनी आँखों से देख रहे हैं। समस्त प्राणीजगत् यथा मनुष्य, पशु, कीट, पतंग, जलचर व नभचरों आदि को ईश्वर ने बनाया है। अन्य कोई सत्ता न तो इन्हें बना सकती है, न चला सकती है और न ही इसके प्रलय करने की सामर्थ्य रखती है। कोई अन्य सत्ता सृष्टि व ब्रह्माण्ड की रचना करने का दावा भी नहीं करती है, इसलिए भी ईश्वर का सृष्टिकर्तत्व सिद्ध है। वैज्ञानिकों के लिए यह असिद्ध इसलिए है कि वैज्ञानिक जड़, स्थूल अथवा पार्थिव जगत् का अध्ययन करते हैं। ईश्वर स्थूल पदार्थ है ही नहीं, अतः वैज्ञानिकों द्वारा किये जाने वाले अध्ययन की सीमाओं के बाहर होने के कारण वह ईश्वर को जान नहीं पा रहे हैं। एक ना एक दिन उन्हें अपना दृष्टिकोण बदलना ही होगा। उन्हें वेद, उपनिषद व दर्शन के आचार्यों के बुद्धि व युक्तिसंगत विचारों को सुनना व समझना होगा। उन पर निष्पक्ष चिन्तन करने पर वह पायेगें कि जीवात्मा की भाँति एक चेतन, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान तत्व और भी है। उसे समझ लेने पर ही वह यथार्थ ज्ञानी कहला सकेंगे। वह दिन इस सृष्टि के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण दिन होगा जिस दिन वह सत्य, चेतन, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सृष्टिकर्त्ता आदि गुणों से युक्त ईश्वर को समझ लेंगे, जान लेंगे व मान लेगें। यथार्थ अध्यात्मवादियों व वेदानुयायियों के लिए भी वह दिन बहुत शुभ होगा क्योंकि

www.thearyasamaj.org

उस दिन सत्य को मानने व मनवाने रूपी उनके कर्तव्य की पूर्ति वा सफलता होगी। यहाँ यह कहना भी उपयुक्त होगा कि आर्यसमाज में भी अनेक वैज्ञानिक हुए हैं। डॉ. प्रो. सत्यप्रकाश सरस्वती, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद व डॉ. प्रो. रामप्रकाश प्रवर वैज्ञानिक रहे हैं जिन्होंने रसायन शास्त्र के क्षेत्र में शोध कार्य किये हैं और सहस्रों विद्यार्थियों को रसायन शास्त्र पढ़ाने के साथ उन्हें शोध कार्य की प्रेरणा, निर्देशन व सहयोग किया। इन्हें, इनके पूर्ववर्ती व समकालीन किन्हीं भी आर्य वैज्ञानिकों को कभी यह शंका नहीं हुई कि ईश्वर नहीं है और यह सारा ब्रह्माण्ड स्वयमेव बना है। लेकिन यह अपने से बड़े वैज्ञानिकों का विरोध नहीं कर सकते। यही कारण है कि विज्ञान के शिरोमणि पुरुष अभी सोचने को भी तैयार नहीं है कि एक सूक्ष्मातिसूक्ष्म, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, अनेकों बार सृष्टि की उत्पत्ति कर उसका संचालन व प्रलय करने वाली एक अनुभवी चेतन सत्ता इस ब्रह्माण्ड में हो सकती है या विद्यमान है। वेद व दर्शनों के अनुसार ईश्वर ने सृष्टि वा ब्रह्माण्ड को जड़-कारण-प्रकृति के सूक्ष्म कणों, सत्, रज व तम से रचा या बनाया है। ईश्वर के द्वारा सृष्टि बनाने का विचार करने के बाद साम्यावस्था भंग हुई और इसमें विकार होने आरम्भ हुए। क्रम से महत्तत्व, अहंकार, पाँच तन्मात्रायें, ज्ञानेन्द्रियाँ कर्मेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि चित्त एवं स्थूल जगत् आदि अस्तित्व में आये। इसका वर्णन ऋग्वेद व वैशेषिक दर्शन में उपलब्ध है जिसे वहाँ देखा जा सकता है। अब यह देखना है कि ब्रह्माण्ड की रचना के बाद इसकी उत्पत्ति के रहस्य को किसने कब व कैसे जाना या खोजा।

इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमें किसी मनुष्य, स्त्री या पुरुष का नाम बताना है। इसके लिए पहली बात तो यह जानना है कि सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने बड़ी संख्या में स्त्रियों व पुरुषों को जन्म दिया। इसे अमैथुनी सृष्टि कहते हैं। इन आदि मनुष्यों में चार व्यक्ति अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा के नाम से जाने जाते हैं। यह माना जाता है कि यह चार लोग सब मनुष्यों में सबसे योग्य, पात्र व पवित्र थे जिसका आधार इनके किसी पूर्व कल्प का जन्म व उसमें किए गये शुद्ध, पवित्र, निष्कामकर्म व योगाभ्यास आदि कार्य थे। इन्हें ईश्वर ने क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद का ज्ञान दिया। ईश्वर सर्वान्तर्यामी अर्थात् जीवात्मा से भी सूक्ष्म होने तथा सर्वव्यापक होने के कारण जीवात्माओं के भीतर भी विद्यमान रहता है। उसे जीवात्मा या जीवात्माओं को अपना सन्देश देने के लिए किसी बाह्य साधन व वाक् आदि इन्द्रिय की आवश्यकता नहीं होती। जीवात्मा के भीतर ही वह अपना वेदों का ज्ञान स्थापित कर देता है।

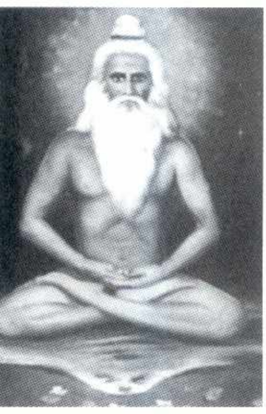

यहाँ यह भी जानने योग्य है कि वेदों का ज्ञान, वेद की भाषा में इसके शब्द-अर्थ-सम्बन्ध सहित दिया गया था और वह ऋषि वेद के प्रत्येक पद, शब्द, वाक्य या पंक्ति का अर्थ जान गये थे तथा उन्हें वेद के निर्भ्रान्त ज्ञान में किसी प्रकार का कोई संशय नहीं था। यह असम्भव नहीं, अपितु सम्भव है। अन्य कोई सम्भावना या विकल्प भी नहीं है। **यह भी जानने योग्य है कि सभी मनुष्यों को भाषा का ज्ञान भी ईश्वर से प्राप्त हुआ था,** यदि न होता तो वह अपना जीवन निर्वाह न कर पाते। यदि ऐसा नहीं मानते हैं तो ईश्वर का सर्वशक्तिमान स्वरूप 'यथानाम तथा गुण' नहीं रहता है, वह स्वरूप सीमित व अल्प-शक्तिमान रहता है। इस प्रकार इन चार ऋषियों को चार वेदों का ज्ञान प्राप्त हुआ। इन्होंने वेदों के ज्ञान को ब्रह्मा जी को दिया और परस्पर भी आदान-प्रदान किया तथा इसके बाद अन्य स्त्री व पुरुषों को पढ़ाया। यहाँ हमें यह ज्ञात होता है कि यह पाँचों व्यक्ति ईश्वर व इस ब्रह्माण्ड को जानने वाले प्रथम पुरुष थे। यह घटना या इतिहास १,९६,०८,५३,११३ वर्ष पुराना है। यदि हम इसे अधिक विस्तार से जानना चाहें तो कठिन है क्योंकि हमारा अधिकांश साहित्य विदेशियों व विधर्मियों ने नष्ट कर दिया। बीच में वेदों के पठन-पाठन में अवरोध उपस्थित हुआ जिसके कारण वेदाध्ययन के अव्यवस्था का शिकार होने से भी सभी तथ्य पूर्णतः विदित व सुरक्षित नहीं हैं, वह या तो नष्ट कर दिये गये या हो गये। समझदार व विवेकी लोग जितने तथ्य उपस्थित होते हैं उन्हें प्राप्त कर पहले उनकी रक्षा करते हैं और शेष के लिए प्रयास करते हैं। लेकिन यहाँ यह स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है कि हमारे विदेशी वैज्ञानिकों में इसके प्रति कोई रुचि नहीं है। ऐसा भी लगता है कि वह कुछ अहं का शिकार हैं जिससे तथ्यों के स्वीकार करने में बाधा आ रही है।

संक्षेप में कुछ चर्चा उन तथ्यों की भी कर लेते हैं जो इतिहास से सम्बन्धित हैं। सृष्टि के आरम्भ में जब जनसंख्या बढ़ी तो समस्यायें पैदा हुईं और लोगों ने खाली पड़ी हुई विस्तृत पृथिवी के दूरस्थ भागों में जाकर बसना आरम्भ किया। दूर जाने के कारण उनका सम्बन्ध व सम्पर्क अपने पूर्व पुरुषों से क्षीण हो गया जिससे उनकी भाषा व ज्ञान में भी अवरोध, परिवर्तन व विकार आये। भाषा में विकारों व अपभ्रंशों के कारण अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग भाषायें बनने लगीं और इस १.९६ अरब वर्षों के समय में वैदिक भाषा संस्कृत अलग-अलग स्थानों पर अपना स्वरूप खोकर

www.thearyasamaj.org

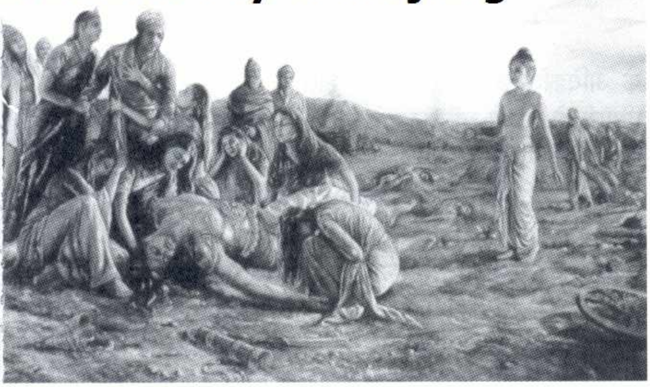

भिन्न-२ भाषाओं में परिवर्तित हो गई परन्तु सब भाषाओं का आधार वेदों की प्राचीन संस्कृत ही है जिसके अनेक प्रमाण वैदिक विद्वानों के पास आज भी उपलब्ध हैं। जिस प्रकार भाषाओं में परिवर्तन आया, समय के साथ-२ दूरस्थ स्थानों में वेदों का ज्ञान, वेदों के संस्कृत में होने व संस्कृत का प्रचलन उन स्थानों में न होने के कारण, क्षीण होता रहा और कालान्तर में विलुप्त व समाप्त हो गया। दूरस्थ देशों व प्रदेशों में ही नहीं अपितु अपने आर्यावर्त्त में भी वेदों की परम्परा, लगभग ५,००० वर्ष पूर्व हुए महाभारत युद्ध के पश्चात् कई कारणों से बाधित हुई। इसका परिणाम यह हुआ कि सर्वत्र अविद्या व अज्ञान का अन्धकार फैल गया। इसके परिणामस्वरूप स्त्रियों वा शूद्रों को वेदाध्यन से ही वंचित कर दिया गया। क्षत्रियों व वैश्यों को भी वेदाध्ययन कराने में उपेक्षा की गई। इस प्रकार कुल जनसंख्या का लगभग १२-१३ प्रतिशत भाग ही वेदाध्ययन कर सकता था। उन्होंने भी आलस्य प्रमाद किया जिससे अज्ञान का अन्धकार और विस्तृत हो गया। वेदों का नाम लेकर जो यज्ञ किए जाते थे उनमें पशुओं को मार कर उनके मांस से आहुतियाँ दी जाने लगी और उन पशुओं का शेष मांस का भक्षण यजमान व पुरोहित करने लगे। ऐसे यज्ञीय-हिंसा के समय में भगवान बुद्ध का आविर्भाव हुआ जिन्होंने यज्ञों में हिंसा का विरोध किया। इसके परिणाम से लोगों ने परम्परागत वैदिक धर्म, जो पाखण्ड, कुरीतियों, अन्धविश्वासों से आप्लावित हो गया था, को त्यागकर बौद्धमत अपना लिया। बौद्ध मत की संख्या बढ़ती चली जा रही थी और दूसरी ओर परम्परागत वेद-हिन्दू मत के अनुयायियों की संख्या कम हो रही थी। कालान्तर में बौद्ध मत के अनुयायियों की संख्या कल्पनातीत बढ़ गई। यह ध्यातव्य है कि बौद्ध मत ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखता जिसका प्रमुख कारण हमारे परम्परावादी वेद-हिन्दू मत के वह लोग थे जिन्होंने ईश्वर व वेद के नाम पर यज्ञों में हिंसा व अधर्म किया था और निर्दोष पशुओं पर अमानुषिक अत्याचार किए थे। लगभग २,५०० वर्ष पूर्व स्वामी शंकराचार्य जी का आविर्भाव हुआ जो वेदों पर आधारित उपनिषदों के ज्ञान से परिपूर्ण थे। उनकी तर्कशक्ति व ऊहा बहुत उच्चकोटि की थी। उन्होंने बौद्ध मत के विचारों व सिद्धान्तों में जो खामियाँ थीं वह शास्त्रार्थ में असत्य सिद्ध कीं और यह सिद्ध किया कि संसार में केवल ईश्वर का ही अस्तित्व है। ईश्वर के अतिरिक्त किसी सत्ता या पदार्थ का अस्तित्व नहीं है। यह संसार हमें भ्रान्ति के कारण दिखाई देता है, ऐसा उनका मत था।

इससे बौद्धों का पराभव होकर पुनः ईश्वरवाद को लोगों ने अपनाया परन्तु जिनके हाथ में धार्मिक सत्ता व अधिकार थे, वह मानसिक रूप से बदले नहीं और बौद्धमत के पराभव से पूर्व की स्थिति जारी रही। इस प्रकार चलते-चलते १९वीं शताब्दी आ गई। भारत के सौभाग्य व ईश्वर की महती कृपा से लगभग १८२४ में गुजरात में टंकारा में जन्मे व प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती के शिष्य महर्षि दयानन्द सरस्वती का आविर्भाव हुआ। उन्होंने ब्रह्मचर्य के तप, योगाभ्यास, गम्भीर अध्ययन व अपनी तीक्ष्ण मानसिक एवं बौद्धिक शक्तियों-क्षमताओं से स्थिति को बदल कर महाभारत से पूर्व का समस्त वैदिक ज्ञान खोज निकाला और वेद, वैदिक ज्ञान व ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति के अस्तित्व का सिद्धान्त, जिसे त्रैतवाद कहा जाता है, को संसार व देश भर में प्रतिष्ठित किया। उनके त्रैतवाद के सिद्धान्त से ही ब्रह्माण्ड का यथार्थ स्वरूप जाना जाता है और सभी शंकाओं का निराकरण होता है। इस सिद्धान्त का पालन व योगाभ्यास कर मनुष्य ईश्वर का साक्षात्कार भी कर सकता है। आज हमारे पास वेदों का ज्ञान अपने यथार्थ शब्द-अर्थ-सम्बन्ध सहित व अपने मौलिक स्वरूप में विद्यमान है। आवश्यकता केवल उसके प्रचार व हठधर्मियों से उसको मनवाने की है। वेदेतर सभी विधर्मियों ने भी अपने मत की खामियों को जानकर अब तर्क-वितर्क व शास्त्रार्थ करना छोड़ दिया है। सब अपने घरों में शेर बने हुए हैं। आज की राजनीति व कानून भी सत्य के निर्धारण में कुछ-कुछ बाधक हैं। असत्य-आस्था को महिमा मण्डित कर ''सत्य'' को झुठलाया जाता है।

इस प्रकार ब्रह्माण्ड के वास्तविक स्वरूप को महाभारत काल के बाद महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सन् १८७५ ई. इससे कुछ समय पूर्व जाना था एवं अपने ज्ञान से ब्रह्माण्ड को खोज लिया था, यह हम कह सकते हैं। महर्षि दयानन्द के विचारों के प्रचार व प्रसार की आज महती आवश्यकता है जिससे सारा देश व विश्व के लोग उनके ब्रह्माण्ड एवं ईश्वर के स्वरूप के बारे में सत्य विचारों से अवगत हो सकें। हम विद्वान् पाठकों के विचार व सुझाव आमंत्रित करते हैं।

१९६, चुक्खूवाला-२, देहरादून-२४८००१
दूरभाष: ०९४१२९८५१२१

www.thearyasamaj.org

दृष्टिकोण

भारत में व्याप्त भ्रष्टाचार : कारण व निवारण

भ्रष्टाचार केवल रुपये के लेनदेन तक ही सीमित नहीं रखा जा सकता इसका बड़ा व्यापक दायरा है अनीति, बेईमानी, घूसखोरी, कुर्सी से चिपके रहना, सत्ता प्राप्ति के लिए बेमेल गठबन्धन, लाभ तथा उसके लिए तरह-तरह के जोड़-बाकी, गुणा-भाग ये भी उसी के रूप हैं। कौटिल्य-चाणक्य ने अपनी पुस्तक अर्थशास्त्र में **२७ प्रकार के भ्रष्टाचार का उल्लेख किया है** आज हम उससे काफी आगे निकल गए हैं। इस पर कटाक्ष करते हुए प्रसिद्ध विधिवेत्ता नानीपालकीवाला ने अपनी पुस्तक We the people of India में लिखा है कि भ्रष्टाचार के कारण तिरंगे का रंग बदल चुका है। केसरिया, सफेद एवं हरे से बदलकर वह लाल, काला एवं बैंगनी बन चुका है तथा वहाँ पर भ्रष्टाचार का झण्डा फहरा रहा है। आजादी के पश्चात् सार्वजनिक एवं

राजनीतिक क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्टाचार के अध्ययन के लिए गठित हुए विभिन्न आयोगों तथा समितियों के निष्कर्ष यह संकेत देते हैं कि भारत में भ्रष्टाचार ने हैरतअंगेज स्थितियाँ प्राप्त कर ली हैं। भ्रष्टाचार की प्रकृति को समझने के लिए तथा उसे दूर करने के सुझाव देने के लिए १९६४ में ही संथानम समिति का गठन किया गया था, जिसने कई महत्वपूर्ण सुझाव भी दिए थे, किन्तु भ्रष्टाचार और भारतीय राजव्यवस्था का रिश्ता इस तरह बन गया है कि मर्ज बढ़ता ही गया है ज्यों-ज्यों दवा की। अब यह महामारी के रूप में हमारे पूरे राजनीतिक, सामाजिक ताने-बाने को नष्ट करने पर अमादा है। भ्रष्टाचार जब इतनी खतरनाक हदों तक पहुँच गया हो तो उसके खिलाफ आवाज कैसे नहीं उठेगी? बिहार आन्दोलन से लेकर शेषन, खेरनार तथा अन्ना हजारे तक प्रतिवाद एवं संघर्ष का एक पूरा सिलसिला है। फिर भी यह हिमालय की तरह टस से मस नहीं होता। कोई भी समाज आज तक भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं हो पाया है। यह ध्रुव सत्य है कि हर समाज में किसी न किसी रूप में भ्रष्टाचार विद्यमान रहता है। सिर्फ कानूनी एवं जनसंवाद की स्थितियों को छोड़कर विकासशील समाज में भ्रष्टाचार कोई बड़ा आक्रोश पैदा नहीं करता, क्योंकि जनता के अधिकांश लोग इसके आदी होते हैं तथा इसे असाध्य बीमारी के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। भारत में भ्रष्टाचार न सिर्फ बड़े पैमाने पर व्याप्त है, बल्कि वह सुव्यवस्थित प्रणालीबद्ध नियोजित एवं स्वैच्छिक बनकर रिश्वतखोरी एवं रिश्वत देने वाले दोनों ही पक्षों को फायदा पहुँचाने वाली व्यवस्था का रूप ग्रहण कर चुका है। यह ऊँचे स्तरों से शुरू होकर नीचे से नीचे के स्तर तक चला गया है। आज भ्रष्टाचार छोटी-मोटी मात्रा में नहीं, बल्कि व्यापक स्तर पर गिनाये जा सकने वाली स्थिति में पहुँच चुका है। नित नई शक्लों एवं रूपों में भेष बदला हुआ भ्रष्टाचार अब पैसों से हटकर वस्तुओं तथा सौदों, वायदों और दलाली जैसी जटिल व्यवस्थाओं में फैल और पसर गया है। इस भ्रष्टाचार में राजननीतिक दल, सत्तासीन नेतृत्व, जन-प्रतिनिधि, नौकरशाह तथा प्रजाजन सभी फँसे हुए हैं।

प्रो.डी.एच. बैले सार्वजनिक दफ्तरों में व्याप्त भ्रष्टाचार के संबंध में कहते हैं कि यदि भ्रष्टाचार को घूस लेने जैसी विशिष्ट क्रिया तक सीमित कर दिया जाए तो यह एक सामान्य दशा है, जो किसी अधिकारी द्वारा निजी लाभ के उद्देश्यों से की जाती है और यह जरूरी नहीं है कि यह सिर्फ धन से ही सम्बद्ध हो। भ्रष्टाचार का ही दुष्परिणाम है कि कोई व्यक्ति चारित्रिक एवं बौद्धिक दृष्टि से चाहे कितना ही उच्च स्तर का क्यों न हो, उसे समाज में वह प्रतिष्ठा व सम्मान नहीं मिल पाता, क्योंकि हमारी विकृत एवं संकीर्ण मनोवृत्ति के कारण समाज में धन ही सर्वोपरि बन गया है भ्रष्टाचारी व जोड़तोड़ बैठाने वालों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है ऐसे में भ्रष्टाचारी एवं गैर कानूनी कार्य करने वाले तेजी से पैसा कमाने के प्रयास में समाज के सभी क्षेत्रों में बढ़ोतरी पाते हैं। आर्थिक दशा को सुधारने की अन्धी दौड़, राजनीतिक मूल्यों में गिरावट, कानूनी तथा सामाजिक स्थितियों की जड़ता से उत्पन्न मनोविकृति एवं कुण्ठा भ्रष्टाचार की गतिविधियों में फैलाव के लिए विशेष रूप से जिम्मेदार है। कहा तो यह भी जाता है कि भ्रष्टाचार के कारण निजी क्षेत्रों में कार्यरत उद्यमियों को व्यापार व उद्योग में क्रियाशील रहने की सुविधा

www.thearyasamaj.org

मिलती है तथा पैसा देने से काम हो जाने की स्थिति पर उन्हें ज्यादा विश्वास होता है।

इस प्रकार भ्रष्टाचार सुरक्षा और आजादी से काम करने का साधन बन जाता है। भारत में व्याप्त भ्रष्टाचार की चर्चा करते हुए मैरोन वीअनर कहते हैं कि अनेक व्यापारी अधिकारियों को घूस इसलिए देते हैं क्योंकि ऐसा करने से उनका काम जल्दी निकल जाता है।

स्वतंत्रता के पश्चात् कार्यपद्धति एवं दृष्टिकोण में नौकरशाही मंगलकारी राज्य के दायित्वों को ओढ़ने में विफल हो गई है। मौजूदा तौर तरीके इतने पेचीदा हैं कि ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर एक ही फाइल को अगणित चक्कर लगाने होते हैं जो कि न तो हितकारी ही है और न वांछनीय। कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार योजनाओं के क्रियान्वयन में नौकरशाही के तौर-तरीकों के कारण ही ७५ करोड़ रु. की निवेश योजना के आरम्भ में ही विलम्ब के कारण अभिवृद्धि हो जाती है। ऐसी स्थिति में कुशल से कुशल उपक्रम लाभ से वंचित होता है। अन्धाधुन्ध नियमों की आड़ में केवल गलत कार्यों के लिए ही नहीं बल्कि जायज कार्यों के लिए भी लोकसेवकों द्वारा हठकर्मी के साथ चौथवसूली की जाती है। जो उनके घरों में जाकर वीडियो, फ्रिज, विदेशी प्रसाधन सामग्री का रूप ले लेते हैं। प्रतिभूति घोटाले की सुनवाई के दौरान एक कटु सत्य उभर कर सामने आया कि नौकरशाही के एक बड़े भाग को राष्ट्र के प्रति कोई उत्तरदायित्व का बोध नहीं है। बहुत सारे उच्चाधिकारियों ने स्थापित नियमों तथा आचार संहिता का अतिक्रमण कर अपने निजी हितों की पूर्ति के लिए कई जघन्य अपराध किए हैं। भ्रष्ट लोक सेवक ईमानदार लोक सेवक की अपेक्षा ज्यादा सुविधाजनक स्थिति में होता है। चाँदी के सिक्कों की झलक दिखाकर लाभदायक स्थान पर स्थानान्तरण करवाने में सफल हो जाते हैं। इसमें प्रशासनिक भ्रष्टाचार संस्थागत रूप धारण कर लेता है। आज स्थिति यह हो गई है कि सरकारी नौकरी में आने वाला कर्मचारी प्रवेश करने से पहले यह सोचता है कि उसे ऊपरी आमदनी कितनी होगी।

हांगकांग स्थित एक **कन्सल्टेन्सी फर्म पॉलिटिकल एंड इकोनॉमिक रिस्क कन्सल्टेन्सी** द्वारा जारी एक रिपोर्ट के अनुसार भारत की नौकरशाही एशिया में सबसे बदतर है। इस रिपोर्ट में एशिया के देशों की नौकरशाही को दस तक क्रम में रखा गया है। भारत को ९.२१ अंक मिले हैं यानी सबसे कम। जबकि सिंगापुर को सबसे बेहतर नौकरशाही वाला देश बताया गया है। उसका अंक २.२५ रहा है। इस कन्सल्टेन्सी ने जो अपना अध्ययन जारी किया है, उसके

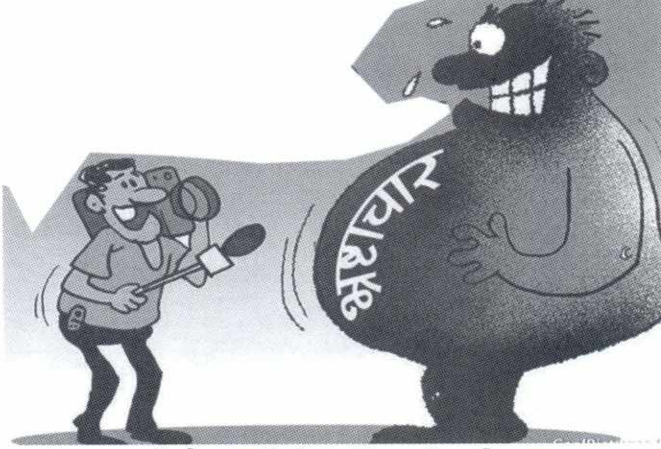

मुताबिक भारत में नौकरशाहों को 'बमुश्किल ही उनके गलत निर्णयों के लिए जवाबदेह ठहराया जाता है' जिसके कारण कॉरपोरेट कम्पनियों को अपना काम करवाने के लिए बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है और यह उनके लिए चुनौती भरा काम होता है। इस रिपोर्ट के अनुसार आम भारतीय के साथ यहाँ निवेश की मंशा रखने वाले विदेशी निवेशक नौकरशाहों को काफी नकारात्मक दृष्टि से देखते हैं। इस बीच वार्षिक सिविल सेवा दिवस (२१ अप्रैल) के लिए कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय ने भारतीय नौकरशाही में फैले भ्रष्टाचार पर जो पुस्तिका तैयार की थी, उसके अनुसार सिविल सेवाओं में भ्रष्टाचार उच्च, मध्य एवं निचले स्तर पर तो फैला ही है साथ ही यह विभिन्न विभागों में केन्द्र, राज्य और जिलास्तर पर भी पैर पसारे हुए है। उच्च स्तर पर फैले भ्रष्टाचार के परिणामस्वरूप राजनीतिकों और नौकरशाहों के बीच मजबूत गठजोड़ बन गया है।

भारतीय नौकरशाही की एशिया में जो सबसे खराब छवि बन गई है उसके लिए रिश्वतखोर नौकरशाह के विरुद्ध अभियोग चलाने की अनुमति देने की प्रक्रिया तथा सम्बद्ध एजेन्सियों की प्रतिबद्धता काफी जिम्मेदार है। जैसे कि मौजूद साक्ष्यों का विश्लेषण, केन्द्रीय सतर्कता आयोग से विचार-विमर्श, राज्य सरकार/केन्द्रीय एजेन्सियों के साथ मिलकर विचार-विमर्श और कभी-कभी कागजातों की अनुपलब्धता के कारण देरी। नारायण द्वारा दिसम्बर २०११ में संसद में दी गई जानकारी के अनुसार पिछले तीन सालों में आईएएस, आईएफएस और आईपीएस अधिकारियों के खिलाफ ४५३ आरोप पत्र दाखिल किए गए। सामी के अनुसार ६४३ और मामलों की जाँच कर रही है। अड़चन जाँच की अनुमति देने में आ रही है। अभियोजन के लिए १६७ में ६८ गुजारिश ऐसी हैं जो तीन साल से ज्यादा समय से अटकी पड़ी हैं। अधिकारियों ने तो ऐसे अनुरोध लटकें, जिसका भी प्रबन्ध कर लिया है। संथानम ने स्पष्ट कहा है कि छोटे तबके के कर्मचारियों तक ही

www.thearyasamaj.org

भ्रष्टाचार सीमित नहीं है। कर्मचारियों की अपेक्षा राजपत्रित अधिकारियों में भ्रष्टाचार अधिक देखने में आया है। समिति के अनुसार वस्तुस्थिति को देखते हुए यह बताना कठिन है कि कितने सरकारी कर्मचारी व अधिकारी भ्रष्टाचारी, घूसखोरी, धन के दुरुपयोग या अनैतिक आचरण में लिप्त रहते हैं।

आज लोकसेवकों की राजनीतिक पहचान बनती जा रही है। सत्ता से जुड़े रहने की ललक ने भी नौकरशाही के प्रभाव को हवा दी है। स्वतंत्रता के पश्चात् तंत्र को अपने सत्ता स्वार्थ के लिए प्रयोग करने की एक नई परम्परा की शुरूआत हुई जिसने प्रशासनिक तंत्र को तोड़कर उसे अनुशासनहीनता अकार्यकुशलता तथा भ्रष्टाचार की तरफ मोड़ दिया । वरिष्ठता तथा गुणवत्ता की अवहेलना कर व्यक्तिगत तथा अन्य भिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर महत्वपूर्ण प्रशासनिक स्थानों पर नियुक्ति दी जाती है। नौकरशाहों को आका चाहिए तथा आकाओं को दुम हिलाने वाली नौकरशाही। नौकरशाह व राजनीतिज्ञ दोनों ही इस व्यवस्था से खुश हैं। राजनेताओं तथा सरकारी कर्मचारियों के नापाक गठबन्धन का ही परिणाम है कि २ जी केजी बेसिन, आदर्श सोसायटी, कॉमनवेल्थ जैसे घोटाले हो सके। यह लूट आजादी के बाद से लगातार बढ़ती गई। पिछले दो दशकों में इस तरह के भ्रष्टाचार में काफी उछाल आया है। अन्ना हजारे ने जब भ्रष्टाचार समाप्त करने की माँग उठाई तो लोगों का जबरदस्त समर्थन मिला।

गोपाल स्वामी आयंगर, ए.डी. गोरवाल, प्रो.एपलबी तथा प्रख्यात लेखक थियोडार मोरीसन के अनुसार नौकरशाही का ह्रास वहाँ से शुरू हुआ जब जन प्रतिनिधियों ने नौकरशाही पर नियंत्रण व अंकुश रखने के स्थान पर नौकरशाही से अनुचित कार्य करवाने आरम्भ कर दिए, जिससे अहित जनता का ही हुआ। यदि राजनीतिज्ञ लोकतंत्र, लोक कल्याण व लोक सेवा के प्रति प्रतिबद्ध होने के साथ प्रामाणिक भी होते तो निश्चित रूप से आज यह दुःखद स्थिति देखने को नहीं मिलती। नौसिखिया मंत्रियों के पास नौकरशाही के ऊपर निर्भर रहने के अलावा कोई विकल्प नहीं रहता। मंत्रिमंडलीय उत्तरदायित्व में नौकरशाही पनपती चली गई तथा राजनीतिक नेतृत्व में अनभिज्ञता के कारण नौकरशाही की शक्तियों में वृद्धि होती चली गई। यदि मंत्री बुद्धिमान, कर्मठ हों तो नीतियों के निर्माण में उनकी छाप झलके तो निश्चय ही नौकरशाही इतनी हावी नहीं होगी।

भारत में इस बात पर प्रायः अधिक बल दिया जाता है कि सरकारी क्षेत्रों से भ्रष्टाचार को हटाया जाए, लेकिन राजनीतिक क्षेत्रों तथा जनजीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार के प्रभाव व उसके प्रसार को देखते हुए इसका सर्वथा उन्मूलन किया जाना संभव प्रतीत नहीं होता है। सुधार के जो प्रयत्न जारी हैं वे भ्रष्टाचार को मिटा पायेंगे यह संभव नहीं दिखता । सबसे बड़ी दुःख की स्थिति तो यह है कि समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार से हुए पतन से कोई सबक नहीं लेता। इन सबका परिणाम यह हुआ है कि प्रशासनिक स्तर पर भ्रष्टाचार मिटाने के आधे दिल से किए जाने वाले प्रयत्न भी निष्फल हो जाते हैं। जिस प्रकार के कानून एवं आचरण नियम सरकारी अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए बने हुए हैं, उस तरह के कानून नियम एवं आचार संहिताएँ राजनीतिज्ञों तथा जन प्रतिनिधियों के लिए भी बनी हुई होनी चाहिए। क्रमशः ....

(साभार-प्रतियोगिता दर्पण)

अनेक विशेषताओं से युक्त १८८४ के मूल सत्यार्थ प्रकाश के सर्वाधिक नजदीक, तत्कालीन शैली का संरक्षण, मुद्रण अशुद्धियों से रहित सत्यार्थ प्रकाश
मात्र ४० ₹
(मानक संस्करण) अवश्य खरीदें।
प्राप्ति स्थल
श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाबबाग उदयपुर - ३१३००१

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹ ११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री आर.डी. गुप्त, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष,श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभाआर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह, प्रो. आर.के.एरन, श्री खुशहालचन्द आर्य, श्री विजय तायलिया, श्री वीरेन्द्र मित्तल, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री भारतभूषण गुप्ता, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री विकास गुप्ता, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक, श्री नरेश कुमार राणा, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी.एकेडमी, टाण्डा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री रघुनाथ मित्तल, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव श्री लोकेश चन्द्र टांक, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ.वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरमुखी, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए.

www.thearyasamaj.org

दयानन्द सरस्वती का यजुर्वेदीय भाष्य और स्वतंत्रता आन्दोलन

स्वामी दयानन्द सरस्वती के हृदय में राष्ट्रभक्ति कूट-कूट कर भरी हुई थी। वे इस बात से अत्यन्त दुखित थे कि हमारा देश विदेशियों के शासन से बुरी तरह से कराह रहा है। वे इस बात को भी किसी भी रूप में स्वीकार करने को सहमत नही थे कि आर्य लोग इस देश में बाहर में आकर बसे हैं। वे सत्यार्थ प्रकाश के आठवें समुल्लास में लिखते हैं-

'किसी संस्कृत ग्रन्थ वा इतिहास में नही लिखा कि आर्य लोग ईरान से आये और यहाँ के जंगलियों से लड़कर जय पाके, निकाल के, इस देश के राजा हुए। पुनः विदेशियों का लेख माननीय कैसे हो सकता है?' फिर वर्तमान राज्य व्यवस्था विदेशियों के हाथ में है यह उनके लिए दुःख का सबसे बड़ा

कारण था। वे इस परदासता के कारण खोजकर लिखते हैं-

'अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है।'

स्वामी दयानन्द सरस्वती किसी विदेशी राज्य के समर्थक नहीं थे। वे आगे लिखते हैं- **'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मत मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं है।'** फिर वे इस स्थिति के कारणों पर विचार कर लिखते हैं- 'भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक्-पृथक् शिक्षा, अलग-अलग व्यवहार वा विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इसके छूटे, परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है। इसलिए जो कुछ वेदादि शास्त्रों में व्यवस्था वा इतिहास लिखते हैं उसी का मान्य करना भद्र पुरुषों का काम है।' उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण में विदेशी राज्य ही हमारे देश में निर्धनता का कारण है, इस पर भी विचार किया है। वे मानते हैं कि सरकार ने नमक पर ही इतना कर लगा दिया है कि गरीब आदमी की पकड़ से बाहर हो गया है। इसी प्रकार उन्होंने वन विभाग द्वारा लगाये गये प्रतिबन्धों पर भी रोष प्रकट किया है। उन्होंने विकेन्द्रीयकरण व शासन व्यवस्था पर भी पर्याप्त लिखा है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के काल में देश तत्काल क्रान्ति करने के योग्य नही था। देश में शिक्षा दो प्रतिशत भी नही थी। निर्धनता ऐसी थी कि कभी तो मुर्दे को ढकने के लिए कफन भी नही मिल पाता था। अंग्रेजों ने देश को निरस्त्र कर दिया था। देश की लडाकू जातियों को सेना में भरती कर अंग्रेजों ने अपना दास बना लिया था। १८५७ की क्रान्ति में सिक्खों और अधिकांश देशी राजाओं ने अंग्रेजों का साथ दिया था। इसलिए उन्होंने पहिले जनता को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करना तथा विद्वानों को क्रान्ति करने का ढंग बताने का कार्य किया। इसके लिए उन्होंने यजुर्वेद भाष्य का उपयोग किया। उन्होंने बड़े धीरे-धीरे विद्वानों को बताया कि तुम्हें क्या करना है। इस विषय को अब हम उनके भाष्य के आधार पर ही आगे बढ़ाना चाहते हैं।

अग्रेणीरसि स्वावेशऽउन्नेतॄणामेतस्य वित्तादधि त्वा स्थास्यति देवस्त्वा सविता मध्वानक्तु सुपिप्पलाभ्यस्त्वौषधीभ्यः।
द्यामग्रेणास्पृक्षऽआन्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपरेणादृंहीः।

-यजुर्वेद अध्याय ६ मंत्र २

भावार्थ- प्रजाजनों के स्वीकार किये बिना राजा राज्य करने के योग्य नहीं होता तथा राजा आदि सभा जिसको-जिसको आदर से न चाहे वह मंत्री होने को वा कोई पुरुष अपनी कीर्ति को उत्तरोत्तर दृढ़ता के बिना सेना का ईश्वर यथायोग्य न्याय से दण्ड करने अर्थात् न्यायाधीश होने और राजा के मंडल की ईश्वरत्ता योग्य नहीं हो सकता।

टिप्पणी- इस मंत्र में मुख्य रूप से यह बताया गया है कि प्रजा यदि राजा को स्वीकार न करे तो वह राजा कैसे रह सकता है? अर्थात् राजा के विरुद्ध जनमत तैयार किया जावे। वास्तव में जनमत में बड़ी शक्ति है। जिस नेपोलियन तृतीय को फ्रांस में जनता ने भारी बहुमत से चुना था एक वर्ष बाद जनमत उसके इतना विरुद्ध हो गया कि उसे फ्रांस से भागकर इंग्लैण्ड में शरण लेनी पड़ी।

दूसरी बात यह है कि बिना सेना को विश्वास में लिए भी कोई राज्य नहीं कर सकता है। पाकिस्तान में यह घटना कई बार दोहरायी गई है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती का इसमें आशय यह था कि सावधानी के साथ सेना में भी देशप्रेम की भावना उत्पन्न की

www.thearyasamaj.org

जावे। उन्हें धीरे-धीरे अपने अंग्रेज अधिकारियों के विरुद्ध भड़काया जावे। सेना और जनता यदि ये दोनों साथ-साथ विदेशी शासन के विरोध में खड़े हो जावें तो स्वतंत्रता प्राप्त करने में अधिक समय नहीं लगेगा। आगे चलकर वे यजुर्वेद अध्याय ६ मंत्र संख्या २२ के भावार्थ में लिखते हैं- 'राजा और राजाओं के कामदार लोग अनीति से प्रजाजनों का धन न लेवें किन्तु राज्य के पालन के लिए राजपुरुष प्रतिज्ञा करें कि हम लोग अन्याय न करेंगे अर्थात् हम सर्वथा तुम्हारी रक्षा और डाकू, चोर, लम्पट, गँवार, कपटी, कुमार्गी अन्यायी और कुकर्मियों को निरन्तर दण्ड देवेंगे।'

इस विचार के द्वारा जनता में असन्तोष उत्पन्न किया जाना था, क्योंकि इस काल की सरकार न्याय पर आधारित नहीं थी। अंग्रेज अधिकारियों को अपराधों में लिप्त होने पर न्यायालय दण्ड नहीं दे पाता था। सामान्य प्रजा अत्याचारों से त्रस्त थी।

देवीरापोऽअपान्नपाद्यो वऽऊर्मिर्हविष्यऽइन्द्रियावान् मदिन्तमः।
तं देवेभ्यो देवत्रा दत्त शुक्रपेभ्यो येषां भाग स्थ स्वाहा। -यजु.६.२७

भावार्थ- प्रजाजनों को यह उचित है कि आपस में सम्मति कर किसी उत्कृष्ट गुणयुक्त सभापति को राजा मानकर राज्य पालन के लिए 'कर' देकर न्याय को प्राप्त हो।

इसका अर्थ यह भी हुआ कि भारतीय प्रजा सम्मति करके किसी श्रेष्ठ पुरुष को राजा स्वीकार कर राज्य चलाने के लिए उसे सहर्ष 'कर' दे। मैं समझता हूँ कि इससे अधिक खुली

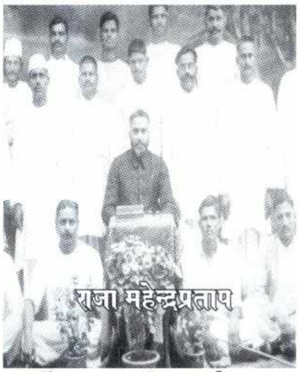

क्रान्ति और दूसरी नहीं हो सकती थी। इसी को ध्यान में रखकर अप्रवासी भारतीयों ने द्वितीय विश्वयुद्ध के समय राजा महेन्द्रप्रताप के नेतृत्व में एक प्रवासी सरकार की स्थापना की थी। यही राजा महेन्द्र प्रताप सिंह स्वाधीनता के बाद भारतीय लोकसभा के सदस्य भी चुने गए थे।

यजुर्वेद ६/१७ में कहा है-

ते नोऽअर्वन्तो हवनश्रुतो हवं विश्वे शृण्वन्तु वाजिनो मितद्रवः।
सहस्त्रसा मेधसाता सनिष्यवो महो ये धनꣳसमिथेषु जभ्रिरे॥

पदार्थ- (ये) जो (अर्वन्तः) ज्ञानवान (हवन श्रुतः) ग्रहण करने योग्य शास्त्रों को चुनने (वाजिनः) प्रशंसित बुद्धिमान (मितद्रवः) शास्त्र युक्त विषय को प्राप्त होने (सहस्त्र साः) असंख्यों विद्या के विषयों को सेवने और (सनिष्यवः) अपने आत्मा की सुन्दर भक्ति करने हारे राजपुरुष (मेधसाता) सभाओं के दान से युक्त (समिधेषु) संग्रामों में (नः) हमारे बड़े (धनम्) ऐश्वर्य को (बभ्रिरे) धारण करें वे (विश्वे) सब विद्वान् लोग हमारे (हवम्) पढ़ने-पढ़ाने से होने वाले बोध शब्दों और वादी प्रतिवादियों के विवाद को (श्रण्वन्तु) सुनें। मंत्र के भावार्थ में स्वामी जी ने असहयोग आन्दोलन की विचारधारा ही प्रस्तुत की दी है। वे लिखते हैं- **'जो ये राजपुरुष हमसे कर लेते हैं वे हमारी निरन्तर रक्षा करें नही तो कर न लें और हम भी उनको कर न देवें।** उनको प्रजा की रक्षा और दुष्टों के साथ युद्ध करने के लिए ही 'कर' देना चाहिए, अन्य किसी प्रयोजन के लिए नहीं, यह निश्चित है।' वास्तव में यह भावार्थ एक क्रान्ति को उत्पन्न करने की सामर्थ्य रखता है। परन्तु स्वामी दयानन्द केवल इतना लिख देने से मात्र से ही सन्तुष्ट नहीं हैं। यजुर्वेद ६/२१ में कहा है-

आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताꣳश्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्।
प्रजापतेः प्रजाऽअभूम स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूम॥

पदार्थ- हे मनुष्यो। तुम्हारी (आयुः) अवस्था (यज्ञेन) ईश्वर की आज्ञा पालन से निरन्तर (कल्पताम्) समर्थ होवे। (प्राणः) जीवन का हेतु बलकारी प्राण (यज्ञेन) धर्मयुक्त विद्याभ्यास से (कल्पताम्) समर्थ होवे। (चक्षुः) नेत्र (यज्ञेन) प्रत्यक्ष के विषय शिष्टाचार से (कल्पताम्) समर्थ होवें। (श्रोत्रम्) कान (यज्ञेन) वेदाभ्यास से (कल्पताम्) समर्थ हों और (पृष्ठम्) पूछना (यज्ञेन) संवाद से (कल्पताम्) समर्थ होवे। (यज्ञः) यज्ञ (यज्ञेन) ब्रह्मचर्यादि के आचरण से (कल्पताम्) समर्थ हो। जैसे हम लोग (प्रजापते) सबके पालने वाले ईश्वर के समान धर्मात्मा राजा के (प्रजाः) पालने योग्य सन्तानों के समान (अभूम) होवें।

भावार्थ- मैं ईश्वर सब मनुष्यों को आज्ञा देता हूँ कि तुम लोग **मेरे तुल्य धर्मयुक्त गुण, कर्म और स्वभाव वाले पुरुष की ही प्रजा होओ अन्य किसी क्षुद्राशय पुरुष की प्रजा होना स्वीकार कभी मत करो।** जैसे मुझ को न्यायधीश मान मेरी आज्ञा में वर्त और अपना सब कुछ धर्म के साथ संयुक्त करके इस लोक और परलोक के सुख को नित्य प्राप्त करते रहो, वैसे **जो पुरुष धर्मयुक्त न्याय से तुम्हारा निरन्तर पालन करे उसी को सभापति राजा मानो।**

मैं समझता हूँ कि इसके बाद कहने को कुछ भी शेष नहीं रहा है। इति।

शिवनारायण उपाध्याय
दादाबाड़ी कोटा, राजस्थान

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्याँमार) स्मृति पुरस्कार

* न्यास द्वारा ON LINE TEST प्रारम्भ।
* वर्ष में तीन बार दिया जावेगा ५१०० रु. का उपरोक्त पुरस्कार।
* आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
* विश्व भर के लोगों से इस ON LINE TEST में भाग लेने का अनुरोध।

बेवसाइट - www.satyarthprakashnyas.org

www.thearyasamaj.org

शिक्षा सबके लिए

- Education to all -

शूद्र शिक्षा- महर्षि दयानन्द सरस्वती, युगों-युगों के पश्चात् ऐसे महापुरुष हुए जिन्होंने दलित, शोषित, असहाय व अस्पृश्य समझे जाने वाले, मानव समाज के एक बड़े वर्ग को उनका अधिकार दिलाने हेतु सर्वविध प्रयास किये। ऐसा करने में उन्होंने केवल मानवीय व समाजशास्त्रीय युक्तियाँ ही प्रस्तुत नहीं कीं वरन् वेद शास्त्रों का प्रमाण देकर अधिकार पूर्वक प्रमाणित किया कि **मनुष्यों के मध्य इस प्रकार का भेदभाव अनुचित ही नहीं पाप है।**

शूद्रों की शिक्षा-दीक्षा के बारे में महर्षि जी के विचार जानने से पूर्व, उनकी दृष्टि में शूद्र कौन है तथा समाज में उसकी स्थिति क्या है यह अति संक्षेप में अवश्य जान लेना चाहिए। वस्तुतः समाज में समरसता प्रवाहित करने वाली, गुण-कर्म-स्वभाव पर आधारित ऋषि प्रणीत **वर्णव्यवस्था** का स्थान जबसे जन्म पर आधारित विषमता, विभेद, विद्वेष की जननी **जाति-व्यवस्था** ने लिया, सब कुछ उलट-पुलट हो गया।

सारे अधिकारों के साथ, समान अवसरों की प्राप्ति के बाद पूर्ण प्रयत्नोपरान्त भी जब कोई बालक बालिका, समाज से अज्ञान, अन्याय, अभाव में से किसी भी बुराई को दूर करने की क्षमता, योग्यता अपने अन्दर विकसित न कर पाने के कारण, निजश्रम से समाज सेवा का व्रत लेता था वह शूद्र पदाधिकारी था। **यह शूद्र न हेय है न अछूत।** वह भी अन्य वर्णस्थ स्त्री पुरुषों के समान ही समाज का अंग है। बस विद्या ग्रहण नहीं कर पाया है। इस प्रकार कोई भी बालक बालिका, किसी भी कुल में जन्म क्यों न ले, अगर विद्याध्ययन नहीं कर पाता तो वह शूद्र ही रहेगा।

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते (स्कन्दपुराण)

मनुस्मृति (२.१७२) में लिखा हैं-

'*शूद्रेण हि समस्तावद् यावद् वेदे न जायते*।' अर्थात् जब तक व्यक्ति का ब्रह्मजन्म-वेदाध्ययन रूप जन्म नहीं होता तब तक वह शूद्र के समान ही होता है।

महर्षि दयानन्द ने मनु-व्यवस्था के आधार पर द्विजों के घरों में **शूद्र को पाचन सेवा के लिए रखने का निर्देश दिया है। स्पष्ट है कि उनकी दृष्टि में शूद्र अस्पृश्य नहीं हैं।**

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि, क्योंकि वर्णव्यवस्था योग्यता आधारित व्यवस्था है अतः जब भी कोई शूद्र या शूद्र कुलोत्पन्न बालक-बालिका आवश्यक योग्यता अर्जित कर लेंगे वे शूद्र न रहकर द्विज कहलाएँगे। प्राचीन भारत के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं।

१.दासी पुत्र कवषऐलूष और शूद्रापुत्र वत्स मन्त्रद्रष्टा होने के कारण ऋग्वेद के ऋषि कहलाए।

२.अज्ञात कुल के सत्यकाम जाबाल ब्रह्मचारी ऋषि बने।

३.चंडाल के घर में उत्पन्न मातंग एक ऋषि कहलाए।

४.निम्न कुल में उत्पन्न बाल्मीकि 'महर्षि वाल्मीकि' कहलाए।

५.ऐतरेय ब्राह्मण का रचयिता महीदास दासी पुत्र था।

परन्तु जन्मगत् जाति-व्यवस्था ने समाज के एक अत्यन्त बड़े हिस्से को हेय, अछूत बनाकर, उनके साथ अमानवीय व्यवहार का निर्देश कर, सभ्य मानव समाज के मुँह पर तमाचा मारा। इतना ही नहीं इस व्यवस्था को हमेशा हमेशा के लिए कायम रखने हेतु उनको वेदाध्ययन ही नहीं अक्षर-ज्ञान से भी विरत् रखा। एक बार जिसने तथाकथित शूद्रकुल में जन्म लिया वह और उसकी आने वाली सभी पीढ़ियाँ हमेशा शूद्र ही रहेंगी। ऐसी कुव्यवस्था बना दी।

इस कुवव्यवस्था ने समाज में जिस विद्वेष व वर्ग संघर्ष की भावना को जन्म दिया है वह सभी के सामने है। शूद्रमात्र के पठन-पाठन को निषिद्ध करने वाली इस समाज विरोधी

व्यवस्था का कोई विरोध न कर पावे, इस निमित्त इसे धर्म व्यवस्था का जामा पहनाने के उद्देश्य से कपोल कल्पित श्रुति व वेदशास्त्रों के मनगढंत विपरीत अर्थों का सहारा लिया गया।

स्त्री शूद्रौनाधीयताम् इति श्रुतेः॥

अर्थात् स्त्री और शूद्र न पढ़ें, यह श्रुति है।

जहाँ, *हृद्यपेक्षया तु मनुष्याधिकारत्वात्* (वै ०१/३/२५) एवं

www.thearyasamaj.org

'सर्वत्वमाधिकारिकम्' (मीमांसा १/२/१६) में वेदाध्ययन को मनुष्यमात्र का अधिकार स्वीकार किया है, अत्यन्त खेद का विषय है कि वहीं पर गौतम धर्मसूत्र का अनुकरण कर इस सूत्र के मिथ्या अर्थ के प्रचारक प्रसारक स्वयं जगद्गुरू आदि शंकराचार्य ने विपरीत व्यवस्था दी। उन्होंने जो लिखा इसका आशय इस प्रकार है-

अर्थात् इससे भी शूद्र का वेदाध्ययन में अधिकार नहीं है, क्योंकि स्मृति में शूद्र के लिए वेद के श्रवण, अध्ययन और वेदार्थ के ज्ञान एवं अनुष्ठान का निषेध है। इसीलिए समीप से वेद का श्रवण करने वाले शूद्र के कानों को पिघले हुये सीसे और लाख से भर दे। शूद्र चलता फिरता श्मशान है इसलिए शूद्र के समीप अध्ययन नहीं करना चाहिए। वह बिना सुने अध्ययन कैसे कर सकता है? यदि शूद्र वेद का उच्चारण करे तो उसकी जीभ काट देनी चाहिए और यदि वेद को याद करे तो उसके शरीर के टुकड़े टुकडे कर देने चाहिए। इसी हेतु से कि शूद्र के लिए अध्ययन एवं अनुष्ठान का निषेध है। ब्राह्मण को चाहिए कि शूद्र को ज्ञान न दे। अध्ययन, यज्ञ और दान का विधान केवल द्विजों के लिए है (संस्कार भास्कर पृष्ठ ३०४ से साभार)।

ऐसी ही भयावह स्थिति महर्षि दयानन्द के समक्ष उपस्थित थी। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश में मानव जीवन निर्माण की जिस योजना को रखा था उसमें मानव मात्र को विद्याध्ययन आवश्यक था जबकि वहाँ स्त्री और शूद्र का अध्ययन निषेध कर, लगभग ८० प्रति. जनता को विद्याध्ययन से वंचित कर विषम परिस्थिति पैदा कर दी थी।

महर्षि जी तो मानते थे कि जैसे द्विजाति वैसे ही शूद्र और स्त्रियाँ भी परमेश्वर की उत्पादित प्रजा हैं। **पृथिवी, जल, वायु,**

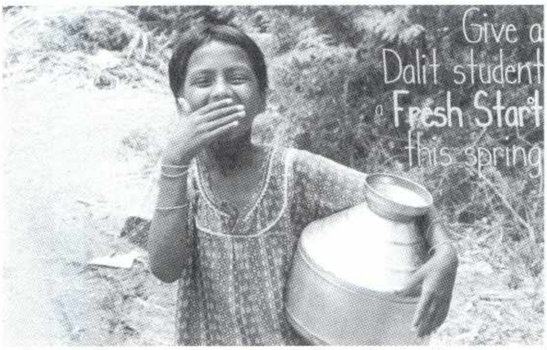

अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा अन्न, वनस्पति आदि जितने भी पदार्थ सृष्टि में हैं, उनके उपयोग का अधिकार सबको समान रूप से प्राप्त है। इसी प्रकार ईश्वर प्रदत्त ज्ञान वेद का अध्ययन कर तदनुकूल आचरण द्वारा मोक्ष प्राप्ति का अधिकार भी मनुष्य मात्र को है। इसलिए वे सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में 'स्त्री शूद्रौनाधीयताम्' जैसी धारणाओं के संदर्भ में लिखते हैं- ''सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्य मात्र को पढ़ने का अधिकार है। तुम कुआँ में पड़ो और यह श्रुति तुम्हारी कपोल कल्पना से हुयी है किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं है। और सब मनुष्यों को वेदादि शास्त्र पढ़ने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद छब्बीस वें अध्याय में दूसरा मंत्र है।

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्याꣳशूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ॥

अर्थ- ''परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्य) सब मनुष्यों के लिए (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देने हारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आवदानि) उपदेश करता हूँ वैसे तुम भी किया करो।''

महर्षि जी आगे लिखते है-

''कहिए अब तुम्हारी बात मानें या परमेश्वर की?परमेश्वर की बात अवश्य माननीय है।'' (सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास)

मानवमात्र के अध्ययन अधिकार के प्रबल पक्षपाती, दयासिन्धु, दयानन्द तत्कालीन समय में स्वार्थी तत्वों द्वारा अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु सभी शूद्रों को विद्याध्ययन के अधिकार से वंचित किए जाने के प्रबल विरोधी थे। वे अत्यन्त मार्मिक शब्दों में लिखते हैं-

''क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता?क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने सुनने का शूद्रों के लिए निषेध और द्विजों के लिए विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ने सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सबके लिए बनाए हैं वैसे ही वेद भी सबके लिए प्रकाशित किए है'' (सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास)

इस प्रकार स्वयं वेद की अन्तर्साक्षी प्रस्तुत कर महर्षि दयानन्द ने मनुष्य मात्र (शूद्रादि सहित) के लिए वेद का शताब्दियों से बन्द पड़ा द्वार खोल दिया। उनकी इस महान् क्रान्ति पर विश्व विख्यात् लेखक और विचारक रोम्यां रोला (Roman Rolland) ने लिखा-

"It was in truth an epoch making date for India when a Brahmin not only acknowledged that all human beings have a right to know the vedas, who had been previously prohibited by orthodox Brahmans, but insisted that their study and propaganda was the duty of every Arya." (Life of Ramakrishna by Roman Rolland page 59)

इसका आशय यह है कि सचमुच भारत के लिए वह नवयुग के निर्माण का दिन था जब एक ब्राह्मण (स्वामी दयानन्द) ने

www.thearyasamaj.org

केवल मात्र यह स्वीकार ही नहीं किया कि मनुष्य मात्र को वेदों को जानने का अधिकार है, जिस अधिकार से उन्हें कट्टरपंथी ब्राह्मणों ने वंचित कर रखा था अपितु इस बात पर बल दिया कि वेद का पढ़ना पढ़ाना और उनका प्रचार करना हर आर्य का धर्म है।

इस प्रकार देववाणी (ईश्वरीय ज्ञान) वेद को जनवाणी बनाने का श्रेय दयानन्द को है। (सत्यार्थ भास्कर पृष्ठ ३८०)

शूद्रों के उपनयन के संदर्भ में महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास में लिखा है कि"...... और शूद्रादि वर्ण उपनयन किए बिना विद्याभ्यास के लिए गुरुकुल में भेज दें।" तृतीय समुल्लास में भी-'द्विज अपने घर में लड़कों का यज्ञोपवीत करके पाठशाला में भेज दें। इस व्यवस्था में शूद्रों के उपनयन के बारे में मौन है। इन बातों को लेकर कुछ लोगों के मन में शंका उठती है कि महर्षि क्या शूद्रों को विद्याध्ययन से वंचित रखना चाहते थे? अतः इस बात पर भी संक्षेप में विचार करना समीचीन होगा।

प्रथम तो उपरलिखित द्वितीय समुल्लास की व्यवस्था से स्पष्ट है कि शूद्रादि वर्णस्थ को भी विद्याभ्यास हेतु गुरुकुल भेजें।

द्वितीय, उपरोक्त 'शूद्र शिक्षा' शीर्षक के अन्तर्गत विवरण से पूर्ण स्पष्ट है कि महर्षि शूद्रों के, न सिर्फ अक्षरज्ञान वरन् वेदाध्ययन तक के प्रबल हामी थे।

जहाँ तक प्राचीन शास्त्रों में शूद्रादि वर्णों के लिए उपनयन का निषेध है, इसे थोड़ा समझने की आवश्यकता है। एक बार पुनः स्मरण करें कि यहाँ शूद्र से अभिप्राय आज की जन्मगत जाति प्रथान्तर्गत् शूद्र से नहीं है। अर्थात् आज तथाकथित शूद्र कहे जाने वाले व्यक्ति (जो कि अगर वस्तुतः पढ़ा लिखा योग्य होने के कारण शूद्र न होकर द्विज ही है) की सन्तानों का उपनयन निश्चित किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में जो पढ़ लिख न पाने के कारण अपेक्षित योग्यता अर्जित न कर पाने के कारण, गुण-कर्म-स्वभाव पर आधारित व्यवस्था के अन्तर्गत शूद्र है, वह कर्मकाण्डों तथा तदजनित् जानकारियों के अभाव में विभिन्न संस्कार आदि व उनके साथ सम्बद्ध व्रत पालनादि करने करवाने में असमर्थ है अतः वहाँ उसे बालक-बालिका का उपनयन संस्कार कराने की जिम्मेदारी से मुक्त रखा गया है। पर उसके बालक-बालिका को भी गुरुकुल भेजना तो अनिवार्य है। गुरुकुल में विद्याभ्यासी होकर उसके बालक-बालिका अगर योग्यता प्रदर्शित करते हैं तो वह द्विज पदाधिकारी होकर ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य पदाधिकारी हो सकेंगे। और जब उनके घर सन्तान पैदा होगी तो समयानुसार उसका उपनयन संस्कार करवाना उसका आवश्यक कर्त्तव्य होगा।

इस विषय को स्पष्ट करते हुए आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान् पूज्य स्वामी विद्यानन्द जी सरस्वती ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ भास्कर में बहुत सुन्दर लिखा है- "जब तक बच्चे छोटे होते हैं, अथवा विद्याध्ययन की समाप्ति पर उनका अपना वर्ण निश्चित नहीं हो जाता तब तक उनके सब संस्कार आदि पारिवारिक परिवेश के अनुसार ही होते हैं। द्विजों के घरों में सभी संस्कार यथावत् होते रहते हैं इसलिये वे अपनी कुल परम्परा के अनुसार समय पर उपनयन संस्कार कराके गुरुकुल में पढ़ने भेजेंगे। शूद्र अतिशूद्र आदि साधारणतया अनपढ़ होते हैं परिणामतः ब्राह्मणादि के बालकों के समान उनके बालक का विकास नहीं हो पाता। उनके घरों में कोई कर्मकाण्ड भी नहीं होता इसलिए विधिवत् उपनयन संस्कार नहीं हो पाता, **परन्तु इस कारण से उसे पढ़ने लिखने का अवसर भी न देना, न्यायोचित नहीं है।** उपनयन के बिना भी उसे गुरुकुल में विद्याध्ययन के लिए भेजने का प्रावधान किया गया है। अवसर दिए जाने पर भी यदि उसे कुछ नहीं आवेगा तो उसे शूद्र समझा जायेगा अन्यथा द्विज सन्तानों की भाँति जिस वर्ण के अनुरूप उसके गुण कर्म स्वभाव होंगे, परीक्षोपरान्त तदनुसार उसका वर्ण घोषित कर दिया जायेगा। इसका निश्चय गुरुकुल से स्नातक बनते समय होगा, ऐसा निर्देश स्वयं ग्रन्थकार (महर्षि दयानन्द) ने चतुर्थ समुल्लास में इन शब्दों में किया है "यह गुण कर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं की सोलहवें वर्ष और पुरुषों की पच्चीसवें वर्ष में नियत करनी चाहिए। (सत्यार्थ भास्कर पृष्ठ २४४)

इस प्रकार महर्षि दयानन्द का एक महान् शिक्षा शास्त्री का रूप, हमारे सम्मुख उपस्थित होता है जिन्होंने राष्ट्र-निर्माण को ध्यान में रखते हुए एक सम्पूर्ण शिक्षा प्रद्धति प्रदत्त की।

- अशोक आर्य
नवलखा महल, गुलाबबाग

ऋषि जीवन के सुन्दर चित्रों से सजी हुई व हिन्दी, अंग्रेजी में ऋषि जीवन को रेखांकित करती हुई यह भव्य एलबम विश्व प्रसिद्ध व प्रशंसित है। प्रत्येक ऋषि भक्त के पास एक प्रति अवश्य होनी चाहिए। यह न्यास की Best seller भी है। स्टॉक सीमित है। ऋषि भक्त शीघ्र मंगवाएँ। मूल्य १२५/- डीलक्स लाइब्रेरी संस्करण २२५/- डाक व्यय अतिरिक्त

पत्रिका से सम्बन्धित किसी प्रकार की जानकारी/शिकायत के लिये निम्न चलभाष पर सम्पर्क करें।
09314535379

दूरभाष : ०२९४-२४१७६९४, चलभाष ०९३१४५३५३७९
कृपया न्यास की वेबसाईट : www.satyarthprakashnyas.org पर अवश्य देखें
प्रत्येक माह की 20 तारीख तक भी पत्रिका न मिलने पर कृपया इसी चलभाष पर सम्पर्क करें।

www.thearyasamaj.org

समाचार

आर्य समाज, रामनगर, अम्बाला छावनी का २२वाँ वार्षिकोत्सव सम्पन्न

इस पुण्य अवसर पर प्रसिद्ध वैदिक प्रवक्ता आचार्य आनन्द पुरुषार्थी के ब्रह्मत्व में सामवेद पारायण यज्ञ आयोजित हुआ। आर्यसमाज के प्रधान डॉ. नरेश बत्रा एवं सुश्री प्रियंका आर्या ने वेदपाठी के रूप में प्रशंसनीय शुद्ध मंत्रोच्चारण से मंत्रमुग्ध किया। आर्यसमाज के अतिरिक्त, आचार्य जी के प्रवचनों का आयोजन सेन्ट्रल जेल में भी रक्खा गया। भजनोपदेशक संदीप 'वैदिक' के भजनोपदेश सराहनीय थे। **-कृष्ण कुमार, मंत्री**

ईश्वर तत्त्व विज्ञान शिविर संपन्न

श्री वैदिक स्वस्ति-पन्थाः न्यास, भागल भीम-भीनमाल के तत्वावधान में यह

शिविर अत्यंत सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। पाठकों को विदित ही होगा कि न्यास के प्रमुख आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक अनेक वर्षों से वैदिक वाङ्मय में विज्ञान की प्रचुर उपलब्धता के संदर्भ में शोध कार्य कर रहे हैं। आधुनिक वैज्ञानिकों के साथ संपर्क में रह, तार्किक व वैज्ञानिक प्रणाली का उपयोग कर आचार्य जी इस समय विशेष रूप से ऐतरेय ब्राह्मण का वैज्ञानिक भाष्य कर रहे हैं। वर्तमान में प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफन हाकिंस ने ईश्वर की आवश्यकता को प्रबलता से नकारा है जिससे विज्ञान के विद्यार्थियों में भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। आचार्य जी ने इस त्रिदिवसीय शिविर के तीन सत्रों में हाकिंस की युक्तियों का तार्किक खंडन कर ईश्वर की अनिवार्यता तथा स्वरूप को स्पष्ट किया व अपने द्वारा किये जा रहे ऐतरेय ब्राह्मण के भाष्य की पद्धति की ओर भी संकेत किया। इस अवसर पर पूज्य स्वामी ओम् आनंद सरस्वती, स्वामी वेदानंद सरस्वती, राजीव गांधी जनजाति विश्व-विद्यालय के कुलपति श्री टी.सी. डामोर, प्रो. मदन मोहन बजाज, कुलाधिपति अंतर्राष्ट्रीय कामधेनु अहिंसा विश्व-विद्यालय, दिल्ली, डॉ. वसंत मदनसुरे, आकोला, डा. रामेश्वर आमेटा, प्राचार्य राजकीय महाविद्यालय कुम्भलगढ़, श्री सुरेश चंद्र अग्रवाल, प्रधान आर्य-प्रतिनिधि सभा गुजरात, श्री अशोक आर्य, कार्यकारी अध्यक्ष, श्रीमद्दयानंद सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर के वक्तव्य महत्वपूर्ण रहे। पं. (डॉ.) मोक्षराज आर्य, अजमेर के संयोजन में सभी सत्रों ने गरिमा व चिंतन के उच्च आयामों को स्पर्श किया। कार्यक्रम में श्री केशवदेव, सुमेरपुर, श्री देवीसिंह, मथुरा, श्री राम निवास गुणग्राहक, दयानन्द स्मृति भवन, जोधपुर, श्री भवानीदास आर्य, मंत्री- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर ने भजन व प्रवचनों के माध्यम से कार्यक्रम में चार चाँद लगाए। **-सुमित शास्त्री**

आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर द्वारा ऋषि निर्वाण दिवस मनाया गया।

उक्त अवसर पर सर्वप्रथम श्री इन्द्रप्रकाश यादव के पौरोहित्य में शारदीय नवसष्येष्टि यज्ञ संपन्न हुआ। तत्पश्चात् श्री इन्द्रदेव पीयूष के मधुर भजन तथा कार्यक्रम के प्रमुख अतिथि डॉ. के.एस. गुप्ता द्वारा महर्षि दयानन्द के जीवन के विभिन्न पहलुओं पर सारगर्भित प्रकाश डाला गया तथा महर्षि दयानन्द के आदर्शों को अपनाने की आवश्यकता को निरूपित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अशोक आर्य ने सत्य के प्रबल आग्रही स्वामी दयानन्द के शिष्यों को अपने जीवन में सत्य को धारित करने हेतु प्रेरणा प्रदान की। अतिथियों का स्वागत डॉ. अमृतलाल तापड़िया द्वारा तथा आभार समाज की मंत्री श्रीमती ललिता मेहरा द्वारा व्यक्त किया गया। कार्यक्रम का सुन्दर तथा सफल संचालन आर्यसमाज के उपमंत्री श्री भूपेंद्र शर्मा ने किया।

-भंवर लाल आर्य, प्रधान आर्य समाज

प्रतिस्वर

आदरणीय संपादक जी, सादर नमस्ते। सत्यार्थ सौरभ लगभग नियमित मिल रहा है। सभी लेख अति उत्तम हैं। आपको साधुवाद एवं धन्यवाद। वेद सुधा में देशोत्थान का उपाय बढ़िया रहा। आदरणीय अशोक जी का लेख सराहनीय एवं प्रकरणानुसार रहा जो अंधविश्वास और अज्ञान से सावधान रहना सिखाता है। "अमृत बरसे" भी उत्तम है। डॉ. पूर्ण सिंह डबास जी का शब्द-प्रवास .... 'मंत्रिन् से चीन में जाकर मेंडरिन' अतीव अच्छा, जो लेखक श्री के स्वाध्याय एवं अध्ययनशीलता का साक्षी है। डॉ. भवानीलाल भारतीय जी तो हमारे पूजनीय हैं, गागर में सागर समा दिया। सभी को सादर प्रणाम, साधुवाद। **- कपिलदेव ओझा**

महर्षि दयानन्द व्याख्यान माला संपन्न

स्वामी दयानन्द जगतोद्धारक, भारत-हितैषी, स्वदेश-भक्त, शिक्षा-शास्त्री, संस्कृति-रक्षक संन्यासी थे, यह विचार आर्य समाज नागदा-उज्जैन द्वारा आयोजित महर्षि दयानन्द व्याख्यान माला के अवसर पर डॉ. लक्ष्मीनारायण सत्यार्थी ने अपने प्रवचन में रेखांकित किए। अतिथि वक्ता के रूप में सर्वश्री दुर्गेश पांचाल, महेश सोनी, रमेश चंदेल, कमल आर्य, भंवरलाल पांचाल आदि ने अपने विचार व्यक्त किये। संचालन पटेल सेवाराम आर्य ने किया।

- पूनमचंद आर्य, प्रधान

वैवाहिक परिचय सम्मलेन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के निर्देशन में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा छठा सम्मलेन १६ जनवरी २०१४ को आर्य समाज मल्हारगंज इंदौर (म.प्र.), तथा सातवाँ सम्मलेन २ फरवरी २०१४ को आर्य समाज विकासपुरी, डी-ब्लाक नई दिल्ली में आयोज्य है। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री विनय आर्य के अनुसार गत ५ सम्मेलनों में २३५ से अधिक रिश्ते हो चुके हैं। गुण-कर्म-स्वभाव को सर्वोपरि मानने वाले इच्छुक व्यक्ति पंजीयन प्रपत्र श्री विजय आर्य (६५४००४०३३६) से डाक द्वारा मांग सकते हैं। यह फार्म www.thearyasamaj.org से भी Download कर सकते हैं। प्रवेश शुल्क प्रति सम्मलेन २०० रु. है। विस्तृत जानकारी के लिए श्री अर्जुनदेव चड्ढा, राष्ट्रीय संयोजक, आर्य वैवाहिक परिचय सम्मलेन से संपर्क करे। (६४१४१८७४२८)। **-अर्जुन देव चड्ढा**

अपनी आत्मा को करे ज्ञान से प्रकाशित

आर्य समाज गायत्री विहार कोटा द्वारा महर्षि दयानन्द का निर्वाण दिवस बड़ी श्रद्धा पूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर आचार्य अग्निमित्र शास्त्री ने प्रेरक उद्‌बोधन प्रदान करते हुए दीपावली पर्व के महत्व को निरूपित किया साथ ही महर्षिवर के जीवन से प्रेरणा लेने का सन्देश दिया। इसके अतिरिक्त श्रीमती सुदेश आहूजा, श्री अर्जुनदेव चड्ढा, श्री रामप्रसाद याज्ञिक, श्री हरिदत्त शर्मा ने भी सारगर्भित उद्‌बोधन प्रस्तुत किये। इस अवसर पर महर्षि दयानन्द वेद प्रचार समिति के अध्यक्ष श्री अरविन्द पाण्डेय तथा पं. खेत्रपाल आर्य का सम्मान किया। **-उमेश कुर्मी, मंत्री**

www.thearyasamaj.org

हलचल

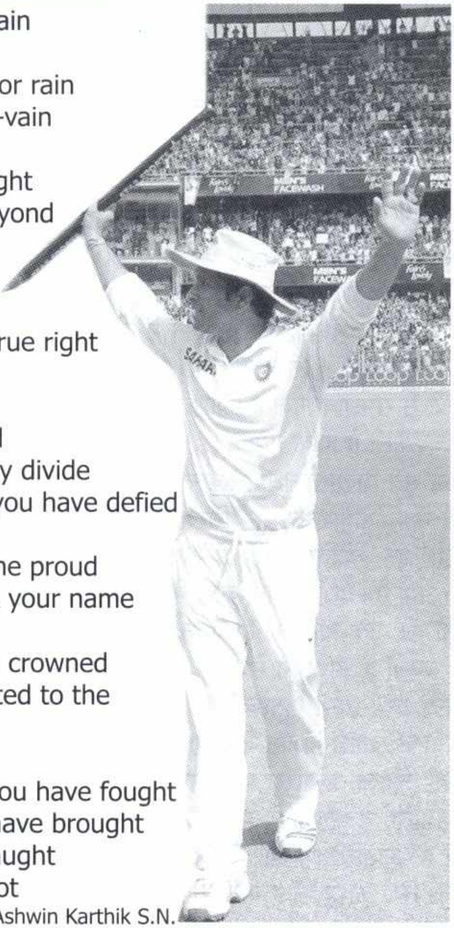

You started with a blood stain
But you went beyond pain
Giving it your all, be it sun or rain
your effort has not gone in-vain

Scaling each and every height
There has been nothing beyond
your sight
Going through intolerable
plight
You are the master in the true right

A friend, an idol and guide
With a heart that never lied
Making a billion forget every divide
Impossibility is something you have defied

Making a nation many a time proud
Each throat wants to speak your name
aloud
As the best, you have been crowned
But you have your feet rooted to the
ground

For all the selfless battles you have fought
And the billion smiles you have brought
For the lessons you have taught
All we can say is thanks a lot

-Ashwin Karthik S.N.

आपका आचरण ही आपके व्यक्तित्व का आइना है

उन्होंने कभी नहीं कहा कि वे भगवान हैं, परन्तु करोड़ों लोगो ने इनको भगवान बना दिया। क्यों?
इनके सुकर्मों के कारण

इन्होंने हर क्षण, हर पल कहा और अभी भी कह रहे हैं कि वे भगवान हैं, पर आज वे कहाँ हैं यह पाठकगण भलीभाँति जानते हैं। क्यों? **अपने कुकर्मों के कारण**

अलविदा

मास्टर-ब्लास्टर

सचिन रमेश तेंदुलकर को
'भारत रत्न'
से नवाजे जाने पर
सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर
से हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ।

www.thearyasamaj.org

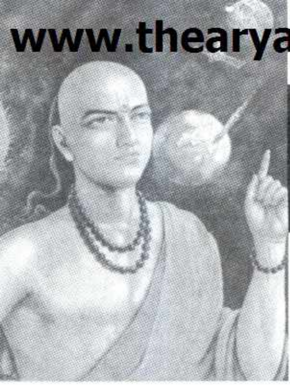

भारत के पुरातन वैज्ञानिक गणितज्ञ तथा खगोलशास्त्री : भास्कराचार्य

डॉ. भवानी लाल भारतीय

वैज्ञानिक जगत् में यह प्रसिद्ध है कि पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति का सर्वप्रथम आविष्कार अंग्रेज वैज्ञानिक सर आइजक न्यूटन ने १६६८ में किया। उन्हें यह ध्यान नहीं कि न्यूटन से लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व भारत के महान् खगोलशास्त्री भास्कराचार्य ने पृथ्वी में विद्यमान गुरुत्वाकर्षण शक्ति की खोज की थी और अपने इस सिद्धान्त का विवेचन स्वग्रन्थों में किया था। महान् गणितज्ञ तथा खगोल विज्ञान के ज्ञाता भास्कराचार्य का जन्म ११७४ वि. में महाराष्ट्र में हुआ था। इनके पिता का नाम महेश्वर था जो स्वयं गणित के पंडित थे। गुरुत्वाकर्षण के अनुसार पृथ्वी में वह शक्ति है जिसके कारण वह प्रत्येक वस्तु को अपनी ओर खींचती है। भास्कराचार्य ने इस मत का प्रतिपादन करने के साथ साथ गणितशास्त्र के दुरुह प्रश्नों का समाधान किया। उन्होंने अपनी पुत्री लीलावती के नाम से अपने गणित विषयक ग्रन्थ को प्रसिद्ध किया। ध्यान रहे कि मध्यकाल में संस्कृत में जो विज्ञान तथा भौतिक विद्याओं विषयक ग्रन्थ लिखे गए वे सब पद्यशैली में अर्थात् श्लोकात्मक लिखे गए हैं। 'लीलावती' भी श्लोकबद्ध है जिसे स्मरण करना आसान है। इस ग्रन्थ में गणित की सामान्य विधियों को रोचक विधियों से समझाया गया है। गणित के मूलभूत जोड़, बाकी, गुणा, भाग के अतिरिक्त वर्गमूल आदि प्रक्रियाओं का विवेचन इस ग्रन्थ में रोचकशैली में किया गया है।

भास्कराचार्य ने खगोल विषयक दो ग्रन्थ लिखे सूर्य सिद्धान्त तथा सिद्धान्त शिरोमणि। ऋषि दयानन्द ने इन्हें आर्ष ग्रन्थ माना है तथा पाठविधि में स्थान देते हुए लिखा है-दो वर्ष में ज्योतिष्शास्त्र, सूर्य सिद्धान्त आदि जिसमें बीज गणित, अंकगणित, भूगोल, खगोल तथा भूगर्भ विद्या है, उसको यथावत् सीखो' इन ज्योतिष ग्रन्थों में विषय विभाजन लीलावती (अंकगणित) २. बीजगणित ३. गणिताध्याय ४. गोलाध्याय के रूप में किया गया है। यद्यपि इनके काल में दूरबीन जैसे किसी उपक्रम का आविष्कार नहीं हुआ था पुनरपि भास्कराचार्य ने सुदूरवर्ती ग्रह नक्षत्रों की गति आदि का अध्ययन स्वाविष्कृत विधियों से किया था जो सचमुच आश्चर्य का विषय है। तारामण्डल तथा आकाशगंगा के रहस्यों के अध्ययन में जब वे तल्लीन हो जाते तो उन्हें भोजन विश्राम की सुध-बुध नहीं रहती थी। खगोल विषयक उनका एक अन्य ग्रन्थ 'कर्ण कुतुहल' है। निश्चय ही भारतीय ज्योतिष तथा गणित के अध्ययन में भास्कराचार्य का योगदान चिरस्मरणीय है। आज खगोल विज्ञान ने असाधारण उन्नति की है। रक्षा विशेषज्ञों ने इस विषय में विशेष अध्ययन अनुसंधान किए हैं। भारत मूल की महिला अन्तरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स तथा प्रथम अन्तरिक्ष यात्री राकेश शर्मा की प्रतिभा सर्वविदित है। जयपुर के महाराजा जयसिंह ने खगोल विद्या के विकास तथा एतद् विषयक अनुसंधान में विशेष रुचि ली थी। यही कारण है कि उन्होंने राजधानी जयपुर के अतिरिक्त काशी तथा दिल्ली में विशाल खगोलीय यंत्र तथा प्रयोगशालाएँ बनवाईं। दिल्ली का जन्तर-मन्तर, जयपुर की वेधशाला तथा काशी का मानमंदिर इसके उदाहरण हैं। ❑❑❑

३/५-शंकर कॉलोनी, श्रीगंगानगर

www.thearyasamaj.org

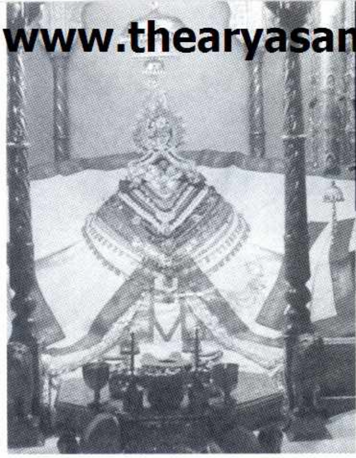

RELIGION

BELIEFS: A MERE SHOWPIECE?

Going past a roadside temple we often bow our head, often join our hands in a pose of NAMASKARA. We do it so frequently that bowing our head in front of the deity has just become one of our habit. Rather a "Meaningless habit".

When people are asked simple questions about their habit of bowing head then there are a handful who do this just because his/her parents asked them to do so or just because other person was doing so. We never think before acting. In a modern world, where everyday a new technology comes into existence, old values are coming to an end.

Without pointing towards any particular section of the society many of the school-girls cover their heads with scarf and give it a name of their religion. But the question which flashes in front of our eyes is that just by wearing a scarf on our head or just by bowing your head in front of the deity who are we trying to impress? Aren't we trying to fool the one who created us?? We talk about our beliefs, our faith, our religion, but do we practice what we talk? The questions to self examine oneself.

Humans have unlimited wants, everyday every person on this earth prays to God in his/her different manners at least once a day. But what do we pray about? "hey Bhagwan meri beti ki shaadi ho jaye", "oh Jesus have mercy on my boy", ya Allah mere marks achche aa jaye". Man's never ending greed. We have taken God for granted. We are considering him an ATM machine that would fulfill all our wishes one day or the other. And with the billions of pending request our creator might also face the problem of choice where resources are limited while applicants are uncountable. Ahh! Man a selfish creature.

Many fasts in the months of Navratras or in Ramzans, but on observing I found that the truth behind being on fast is that many people do it just to be in shape, just to maintain their figure. We remember God in times of pain, to overcome the burning heat. But there are very few who thank him for their achievements because they know that through their entire path to success he was the one holding their hands.

Now what actually is religion? If merely bowing head in front of the deity, wearing scarf's on head or being on fast is considered to be one's religion, then my friends a serious attention has to be given on the issue. Is our religion, our beliefs, our practice are none other than a showpiece hung on the walls to beautify the house? Merely by completing the rituals you might be able to beautify the walls but you would not be able to fill the house with the pure fragrance unless you know the meaning behind every single ritual and its need in today's world. Religion is a mechanism which helps a person to

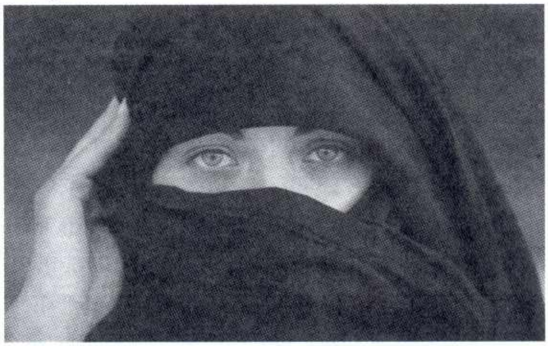

lead his/her life comfortably sprinkled with values so that when a person looks behind him/her he/she would never get something to regret. Helping others, being obedient, caring, kind, truthful, trustworthy are the few values that are told to be followed through the Shloka's in our holy book"Bhagvadgita".

What would we pass to our next generation? All materialistic or something idealistic too? A writer through his/her pen can only put questions in front of the readers while the solution lies within us. **Religion has nothing to be shown in front of others it is something that needs to be placed inside ourselves, deep inside our hearts.**

Vani Bansal (Class XII)
329, Sant Nagar, East Kailash
New delhi- 110065

www.thearyasamaj.org

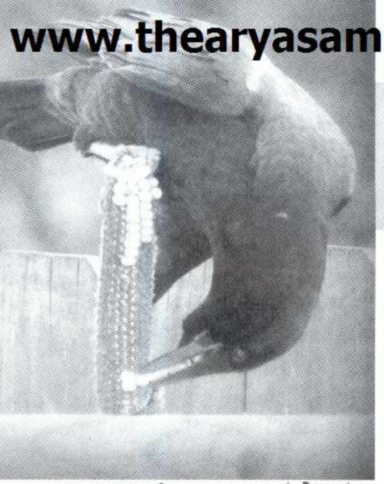

बलिवैश्वदेव यज्ञ कब और कहाँ?

पोषण विज्ञानी प्रत्येक व्यक्ति के लिए प्रतिदिन चार बार आहार लेने की सिफारिश करते हैं- प्रातराश (ब्रेकफास्ट), दोपहर का भोजन (लंच), सायंकालीन अल्पाहर (स्नैक्स) तथा रात्रि-भोजन (डिनर)। ये चारों आहार अलग-अलग नियत समय पर लेने का प्रावधान है। प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि चारों आहार एक ही समय में एक साथ लेने की बाध्यता कर दी जाये तो क्या ऐसा संभव है? उत्तर निश्चित रूप से 'नकार' में ही होगा।

इसी तारतम्य में एक अन्य प्रश्न-आप स्वयं को महर्षि दयानन्द का सच्चा भक्त कहते हो, यह भक्ति क्या वैसी ही है, जैसी पौराणिक 'राम', 'कृष्ण' आदि देवी-देवताओं के प्रति करते हैं यानि जो जितना अधिक उनका नाम जपे, जितनी अधिक बार उनकी प्रतिमा का पूजन करे, धर्मग्रन्थ माने जाने वाले 'रामायण', 'श्रीमद्भागवत' आदि ग्रन्थों की जितनी अधिक बार आवृत्ति करे, वह उतना ही महान् व सच्चा प्रभु-भक्त है। अभिप्राय यह है कि स्वयं को आर्य समाजी विचारधारा का पोषक मानने वाले क्या केवल ऋषि दयानन्द का नाम जपने, उनके चित्र की पूजा-अर्चना करने, उसे विद्युत-लड़ियों से सुसज्जित करने में ही स्वयं को कट्टर ऋषि-भक्त मानते हैं या महर्षि के सिद्धान्तों एवं मन्तव्यों का अनुपालन करने में। यदि आप स्वयं को वास्तविक अर्थों में ऋषि-भक्त मानते हैं तो उनके मन्तव्यों/सिद्धान्तों का अनुपालन करने में कोताही क्यों? ये प्रश्न ऐसे थे कि जिन्हें सुनकर श्रोताओं में एकदम शान्ति-मौन (पिन ड्राप साइलेन्स)- सबका विस्मय भरी दृष्टि से निहारना।

श्रोताओं के विस्मय को देखते हुए वक्ता ने अपने वक्तृत्व के क्रम को जारी रखते हुए स्पष्ट किया कि उन्होंने उक्त प्रश्न पंचमहायज्ञ, विशेषकर बलिवैश्वदेव यज्ञ के सन्दर्भ में किये हैं। मनु महाराज ने मनुस्मृति में पाँच महायज्ञों का विधान किया है:

पञ्च क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम्। -मनु ३.६१

इसके आधार पर महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी स्वररचित ग्रन्थों-सत्यार्थप्रकाश, पंचमहायज्ञ-विधि, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में पंच महायज्ञों को करने का आदेश दिया है। ये पाँच यज्ञ हैं: ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेवयज्ञ, अतिथियज्ञ। मनु ने इन यज्ञों को कुछ यों व्याख्यात किया है:

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्।। -मनु ३.७०

अर्थात् पढ़ना-पढ़ाना, संध्योपासन करना 'ब्रह्मयज्ञ' कहलाता है, माता-पिता आदि की सेवा-सुश्रूषा तथा भोजन आदि से तृप्त करना 'पितृयज्ञ', प्रातः-सायं हवन करना 'देवयज्ञ', कीटों-पक्षियों-कुत्तों एवं कुष्ठ रोगियों आदि के लिए भोजन का भाग बचाकर देना 'भूतयज्ञ' या 'बलिवैश्वदेवयज्ञ' तथा अतिथि-सत्कार 'नृयज्ञ' या अतिथियज्ञ' कहलाता है। इन यज्ञों को 'अहुत', 'हुत', 'प्रहुत', 'ब्राह्महुत' और 'प्राशित' नाम भी दिया गया है:

अहुतं च हुतं चैव तथा प्रहुतमेव च।
ब्राह्मयं हुतं प्राशितं च पंचयज्ञान्प्रचक्षते।। -मनु ३.७३

यहाँ मनु को अहुत से ब्रह्मयज्ञ, हुत से होम अर्थात् देवयज्ञ, प्रहुत से भूतयज्ञ या बलिवैश्वदेवयज्ञ, ब्राह्महुत से अतिथि यज्ञ तथा प्राशित से पितृयज्ञ अभिप्रेत है:

जपोऽहुतो हुतो होमः प्रहुतो भौतिको बलिः।
ब्राह्मयं हुतं द्विजाग्र्यार्चा प्राशितं पितृतर्पणम्।। -मनु ३.७४

प्रत्येक वह व्यक्ति जो घर में निवास करते हुए भी (सूनादोषैः) चूल्हे आदि में हुए हिंसा के दोषों से बचे रहना चाहता है उसे इन पाँच यज्ञों को अवश्य करना चाहिए, ऐसा मनु ने विधान किया है (मनु. ३.७१)। जो व्यक्ति इन पाँच यज्ञों को नहीं करता है वह वास्तव में नहीं जीता है, अर्थात् मृत के समान है-**'न निर्वपति पञ्चानामुच्छ्वसन्न स जीवति'** (मनु. ३.७२)। यदि किसी कारणवश कोई पाँचों यज्ञ नहीं कर सके तो उसके लिए मनुस्मृतिकार ने एक विकल्प सुझा दिया है कि वह प्रतिदिन ब्रह्मयज्ञ और देवयज्ञ तो अवश्य ही करे, ताकि वह समस्त चेतन एवं जड़-चेतन का पालन-पोषण करने में सक्षम बन सके।

स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्याद्दैवे चैवेह कर्मणि।
देवकर्मणि युक्तो हि बिभर्तीदं चराचरम्।। -मनु ३.७५

इन यज्ञों को करने का समय व स्थान भी निर्धारित है। ब्रह्मयज्ञ रात्रि और दिन के दोनों सन्धि-कालों में करने का विधान है- *"रात्रिन्दिवयोः सन्धिवेलायामुभयोस्सन्ध्ययोः सर्वैर्मनुष्यैरवश्यं परमेश्वरस्यैव स्तुतिप्रार्थनोपासनाः कार्याः"* (पंचमहायज्ञविधि, महर्षि दयानन्द सरस्वती)। ब्रह्मयज्ञ एवं देवयज्ञ (अग्निहोत्र) प्रातः-सायं करने के विषय में महर्षि दयानन्द

www.thearyasamaj.org

सरस्वती ने पंचमहायज्ञविधि में अथर्ववेद के निम्न मंत्रों को भी उद्धृत किया है:

सायंसायं गृहपतिर्नो अग्निः प्रातः प्रातः सौमनसस्य दाता ।
वसोर्वसोर्वसुदान एधि वयं त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम ।
प्रातः प्रातर्गृहपतिर्नो अग्निः सायंसायं सौमनसस्य दाता ।
वसोर्वसोर्वसुदान एधीन्धानास्त्वा शतंहिमा ऋधेम् ॥ -अथर्व. १९.५५.३, ४

इस काल निर्धारण की पुष्टि षड्विंशब्राह्मण और तैत्तिरीय आरण्यक के निम्न उद्धरणों से भी हो जाती है:

तस्माद् ब्राह्मणोऽहोरात्रस्य संयोगे सन्ध्यामुपास्ते स ज्योतिष्या ज्योतिषा दर्शनात् सोऽस्याः कालः सा सन्ध्या । तत् सन्ध्यायाः सन्ध्यात्वम् ॥ षड्विंशब्रा. ४.५

उद्यन्तमस्तं यान्तमादित्यमभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान् सकलं भद्रमश्नुते ॥ तैत्तिरीय आ. २.२.२

मनु ने भी सन्ध्योपासन का यही समय निर्धारित किया है:

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत्सावित्रीमर्कदर्शनात् ।
पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्ष विभावनात् ॥ -मनु २.१०१

अर्थात् दो घड़ी रात्रि से लेकर सूर्योदय पर्यन्त प्रातः सन्ध्या और सूर्यास्त से लेकर तारों के दर्शन पर्यन्त सायंकाल में सविता की उपासना गायत्र्यादि मन्त्र के अर्थ विचार पूर्वक नित्य करें। मनु ने यहाँ तक कह दिया है कि जो ऐसा नहीं करता है उसे द्विजकुल से अलग करके शूद्रकुल में रख देना चाहिए-

न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम् ।
स शूद्रवद् बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः ॥ -मनु २.१०३

पंचमहायज्ञ की शृंखला में तीसरा यज्ञ है पितृयज्ञ। जीवित माता-पिता आदि वृद्धजनों का सत्कार ही पितृयज्ञ है। यह यज्ञ किसी काल व स्थान का मोहताज नहीं है।

इसके बाद भूतयज्ञ या बलिवैश्वदेव यज्ञ आता है।

बलिवैश्वदेव यज्ञ में निम्नलिखित तीन कर्म किये जाते हैं:

क. जब भोजन सिद्ध हो चुके तब जो कुछ भोजनार्थ बना हो, उसमें से खट्टा, लवणान्न और क्षार को छोड़कर घृतमिष्ठयुक्त अन्न लेकर 'ओम अग्नये स्वाहा' आदि दश मन्त्रों से प्रज्ज्वलित अग्नि में आहुति दी जाती है।

ख. **भूमि पर थाली या पत्ता रखकर** उस पर 'ओं सानुगायेन्द्राय नमः' 'ओं सानुगाय यमाय नमः' आदि **सोलह मन्त्रों द्वारा** प्रत्येक से पूर्व दिशा आदि क्रम से

घृतमिष्ठयुक्त अन्न के भाग रखे जाते हैं। ये भाग किसी अतिथि को दे दिये जाते हैं या अग्नि में छोड़ दिये जाते हैं।

ग. इसके बाद लवणान्न अर्थात् दाल, भात, शाक, रोटी आदि के छः भाग भूमि पर रखे जाते हैं, जो कुत्ते, पतित, चाण्डाल, पापरोगी, कौए और कृमि अर्थात् चींटी के निमित्त होते हैं:

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम् ।
वायसानां कृमीणां च शतकैर्निर्वपेद् भुवि ॥ -मनु ३.९२

अब प्रश्न उपस्थित होता है कि बलिवैश्वदेव यज्ञ के अंतर्गत विहित तीनों कर्म किस स्थान पर किये जाने चाहिए? शास्त्र-सम्मत उत्तर है कि ये **तीनों कर्म भोजनागार (रसोईघर)** में करने का विधान है।

इस सन्दर्भ में मनुस्मृति का होम विधायक निम्न प्रमाण द्रष्टव्य है, जिसे महर्षि दयानन्द ने भी उद्धृत किया है:

वैश्वदेवस्य सिद्धस्य गृह्येऽग्नौ विधिपूर्वकम् ।
आभ्यः कुर्याद्देवताभ्यो ब्राह्मणो होममन्वहम् ॥ -मनु ३.८४

यहाँ 'गृह्येऽग्नौ' शब्द से स्पष्ट है कि बलिवैश्वदेव-होम गृह्यअग्नि में करना है। स्वामी जी के शब्दों में, "चूल्हे से अग्नि अलग धर, उसकी पाकाग्नि में विधिपूर्वक होम नित्य करें।" मनु एवं महर्षि दयानन्द के उक्त विचारों की पुष्टि महर्षि अंगिरा एवं महर्षि कात्यायन के इन वचनों से भी होती है:

यस्मिन्नेव पचेदन्नं तस्मिन् होमो विधीयते । म. अंगिरा
यस्मिन्नग्नौ भवेत् पाको वैश्वदेवस्तु तत्र । छन्दोगपरिशिष्ट

बलिवैश्वदेवयज्ञ के उक्त प्रावधान का प्रयोजन बताते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में लिखा है- "हवन (बलिवैश्वदेव यज्ञ का होम) करने का प्रयोजन यह है कि पाकशालास्थ वायु का शुद्ध होना और जो (चूल्हा जलाने से) अज्ञात अदृष्ट जीवों की हत्या होती है उसका प्रत्युपकार कर देना।"

संभवतः पहली-दूसरी पीढ़ी की माताएँ इसी भावना के वशीभूत हो अपने घरों में बने भोजन का कुछ अंश सर्वप्रथम

www.thearyasamaj.org

उस चूल्हे या अंगीठी में डालती थीं, जिसमें भोजन बनाया जाता था। कुछ परिवारों में आज भी यह परम्परा अक्षुण्ण है। आज के परिप्रेक्ष्य में मन में यह विचार उत्पन्न हो सकता है कि जब भोजन आदि गैस पर बनाया जाने लगा है, चूल्हे-अंगीठी का नामोनिशान ही नहीं रहा तो यह होम कहाँ और कैसे किया जाये? हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि दूरदृष्टि वाले थे और उन्हें संभवतः इस समस्या का पूर्वाभास था, इस कथन की पुष्टि, 'गृह्यज्ञकल्पावलि' के इस श्लोक से होती है:

न चुल्यायां नायसे पात्रे न भूमौ न च खर्परे।
वैश्वदेवं प्रकुर्वीत कुण्डे वा स्थण्डिलेऽपि वा॥

अर्थात् वैश्वदेव होम कुण्ड में या स्थण्डिल में करना चाहिए, न कि चूल्हे, लोहे के पात्र या भूमि पर या खप्पर में। फिर यह कुण्ड किस धातु का बना होना चाहिए, इसका उत्तर देते हुए **'माध्यन्दिवाजसनेयह्यकार'** ने स्पष्ट किया है- **"अपि ताम्रमयं प्रोक्तं कुण्डं मनीषिभिः"** अर्थात् विद्वानों के मतानुसार यह कुण्ड तांबे का होना चाहिए।

इस पर कुछ याज्ञिक शंका करते हैं कि इस कुण्ड में 'गृह्यग्नि' कैसे उत्पन्न की जायेगी। इसका समाधान भी उपलब्ध है, वह यह कि गैस/बिजली के चूल्हों से लकड़ी, रुई, धूपबत्ती, अगरबत्ती, कपूर आदि जलाकर इस कुण्ड में अग्नि उत्पन्न की जा सकती है। सौर चूल्हे पर भोजन बनता हो तो सूर्य-किरणों से भी अग्नि पैदा करने का साधन उपलब्ध है। अन्य कुछ संभव न हो तो दियासलाई जलाकर पाकशाला में उत्पन्न की गयी अग्नि भी 'गृह्यग्नि' कहलायेगी एवं पाकशाला में ही और 'गृह्यग्नि' में ही बलिवैश्वदेव यज्ञ का होम करना शास्त्रानुकूल है और जिस प्रयोजन से यह होम किया जाता है, वह पूर्वोक्त प्रयोजन भी पाकशाला में ही तथा गृहअग्नि में ही होम करने से सिद्ध हो सकता है। इस विधान के होते हुए भी आजकल अधिकांश विद्वान्/विदुषी ब्रह्मा/पुरोहित देवयज्ञ या पारायण यज्ञ के अन्त में ही यजमान से बलिवैश्वदेव यज्ञ के होम की आहुतियाँ भी डलवा देते हैं और तर्क संगत ढंग से शास्त्र विहित विधान से अवगत कराने पर भी हठ-धर्मिता का परिचय देते हुए 'परम्परा' की अथवा आश्रमों/संस्थाओं में अधिकारियों के आदेशों की दुहाई देकर अनवरत रूप से ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ और बलिवैश्वदेव यज्ञ एक ही साथ करवाना अपना अधिकार मानते हैं। यह परम्परा सर्वथा अशास्त्रीय है और इससे बलिवैश्वदेव यज्ञ के होम का प्रयोजन भी सिद्ध नहीं होता है। अतः शास्त्रविरुद्ध कृत्य के दोष से बचने के लिए ऋषि-मुनियों एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती को अभिमत विधि-विधान का ही कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए।

२१७, आर्यवानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)

मोबाइल उपभोक्ताओं के लिए सुरक्षा निर्देश

१. दूरी रखें। जहाँ तक संभव हो अपने सैलफोन को शरीर से दूर रखें।

२. हैड सेट (तार सहित अथवा ब्ल्युटूथ का प्रयोग करें) और इस तरह से सैलफोन को अपने सिर से दूर रखें।

३. अपने सैलफोन को आपके कान के साथ दबाकर प्रयोग न करें।

४. रेडियो की तरंगित ऊर्जा जितना ज्यादा नजदीक हैण्डसेट होता है उतनी ही ज्यादा शरीर के द्वारा अवशोषित की जाती है।

५. मोबाइल पर बात करने की अवधि को सीमित रखें।

६. जब भी संभव हो बातचीत की बजाय एसएमएस को प्राथमिकता दें।

७. अपने सेलफोन को स्पीकर मोड पर रखें।

८. जहाँ नेटवर्क अच्छा हो वहाँ फोन का उपयोग करें जब नेटवर्क कमजोर होता है तो मोबाइल को अपने ट्रान्समीशन पावर बढ़ानी पड़ती है। अतः घनीभूत नेटवर्क होने पर ही बात करें।

९. जब आपका सिर गीला हो अथवा आपने मेटल फ्रेम का चश्मा पहन रखा हो उस समय मोबाइल से बात करने से बचें क्योंकि धातु और पानी रेडियो तरंगों के सुचालक होते हैं। इससे पूर्व कि आप अपने मोबाइल सेट को अपने कान पर लगायें अथवा बात आरम्भ करें कॉल को कनेक्ट हो जाने दीजिए क्योंकि एक मोबाइल फोन सर्वप्रथम उच्च ऊर्जा के साथ कम्यूनिकेशन करता है तत्पश्चात् ऊर्जा को एक सीमा तक घटाता है।

१०. कॉल कनेक्टिंग के समय ज्यादा ऊर्जा विसरित होती है।

११. अगर आपके पास विकल्प के तौर पर लैण्डलाइन फोन हो तो उसको प्राथमिकता दें।

१२. जब आपका फोन चालू हो तब उसे अपने कमीज अथवा पेन्ट की जेब में न रखें क्योंकि चालू हालत में मोबाइल फोन स्वतः ही एक अथवा दो मिनिट के अंतराल से नेटवर्क ढूढ़ने के लिए उच्च स्तर की ऊर्जा प्रवाहित करता है।

१३. बालकों व किशोरों में मोबाइल फोन के उपयोग को कम करें क्योंकि उनको ज्यादा समय तक के लिए सैलफोन के रेडियेशन का सामना करना पड़ेगा।

१४. जिन लोगों ने किसी तरह का चिकित्सकीय इम्पलॉन्ट करवा रखा है उन्हें कम से कम अपने शरीर से १५ सेमी.दूर रखना चाहिए। जब आप मोबाइल हैण्ड सेट खरीद रहे होते हो तो उसकी एस.ए.आर.वेल्यू की जानकारी कीजिए।

१५. जब आप कार में बैठकर बात करते हैं तो मोबाइल फोन का रेडियेशन बढ़ जाता है। अतः हैण्डस फ्री अथवा ब्ल्युटूथ का उपयोग करें। मोबाइल फोन का अत्यधिक प्रयोग नर और नारी दोनों में जननतंत्र को प्रभावित करता है और गर्भवती महिलाओं में अजन्मे शिशुओं में भी डिर्फोमिटी पैदा करता है।

सौजन्य
दूरसंचार विभाग, संचार एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय
भारत सरकार (अन्तर्जाल पर उपलब्ध)

www.thearyasamaj.org

ऋग्वेद की ऋचाओं पर आश्रित लोक पर्व सांझी

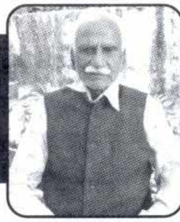

डॉ.बृजमोहन जावलिया

भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों, विशेषकर राजस्थान, गुजरात, मालव, महाराष्ट्र, ब्रजमंडल और बुन्देलखण्ड में कन्याओं द्वारा अश्विन मासके कृष्णपक्ष में पूरे पन्द्रह दिन तक मनाया जाता है जिसे संझ्या या सांझी कहते हैं। इस पर्व में बालिकाएँ प्रतिदिन बछिया के गोबर से अपने घर के मुख्य द्वार के पास दीवार पर संझ्या की आकृतियाँ बनाकर उन्हें फूल-पत्तियों, रंग-बिरंगी पन्नियों आदि से सजाकर गीतों की लय में पूजती हैं। वे उन्हें अपने ही प्रदेश में जन्मी ब्याही देवी मानकर राजस्थान में उसका पीहर (पितृगृह) सांगानेर में और ससुराल अजमेर में हुआ मानती हैं तो मालवा प्रदेश की बालिकाएँ सागर में उसका ससुराल बताती हैं। यह कहीं बारह वर्ष की वय की भोली-भाली कन्या, कहीं बड़े बाप की बड़ी बेटी और कहीं रूठकर रह रही बेटी के रूप में वर्णित की जाती है। कहीं इसका चित्रण पातली (क्षीणकाय) पेमा के रूप में और कहीं जाडली (स्थूलकाय) जशोदा के रूप में किया जाता है। लोक साहित्य के एक विद्वान् ने उसे राजस्थान की लोकगाथा में आये व्याघ्रमुख बाघा रावत के द्वारा अपने पुरोहित खोड़े (खंज) ब्राह्मण को प्रदत्त पत्नी के रूप में उल्लिखित करते हैं।

हमारे यहाँ लोक प्रचलित अधिकांश पर्वों का मूल वेदमंत्रों में निहित दिखाई देता है। पुराणकारों ने इन्हें अपनी दृष्टि से कल्पित कर आख्यानों में स्थान दिया है तो जन सामान्य ने भी सीधे वेदों से या इन पुराणाख्यानों से ग्रहण कर अपना स्वरूप दिया है। संझ्या पर्व का मूल भी हमें ऋग्वेद की निम्नांकित दो ऋचाओं के आधार पर रचित पौराणिक कथाओं में दिखाई देता है। इन ऋचाओं में सूर्य के उत्तरायण और दक्षिणायन में संक्रमण और लीलाओं का वर्णन हैं। देखें-

त्वाष्टा दुहित्रे वहतुं कृष्णोतीतीदं विश्वं भुवनं समेति ।
यमस्य माता पर्युह्यमाना महो जाया विवस्वतो ननाश । -ऋ. १०।१७।१

त्वष्टा ने अपनी पुत्री का विवाह सूर्य से कर दिया। सकल जगत् के जीव इसीलिए इकट्ठे हुए हैं। यम की माता और सूर्य की पत्नी ने स्वयं को छिपा लिया।

अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वी सवर्णामदद्धुर्विवस्वते ।
उताश्विनावभरद्यत्तदासीदजहादु द्वा मिथुना सरण्यूः ॥ -ऋ १०।१७।२

देवताओं ने मृत्यु के निकट होकर अमृत को छिपा लिया और सूर्यदेव को उसकी प्रतिकृतिदान कर दी फिर सरण्यु ने गर्भधारण करके अश्विनीद्वय को जन्म दिया।

मार्कण्डेय पुराण में इन ऋचाओं को आख्यान में विरचकर लिखा है कि सूर्य ने त्वष्टा की कन्या सरण्यु (संज्ञा) से विवाह किया। उससे मनु, यम नाम के पुत्रों और यमी नाम की पुत्री का जन्म हुआ। सरण्यु उसके तेज को सहन न कर सकी और अपने पिता के घर (पितृगृह) उत्तर कुरु के लिए पलायन कर गई। वहाँ वह अश्वी का रूप धर तपस्या करने लगी। पलायन करते समय वह अपनी ही आकृति वाली छाया को उत्पन्न कर सूर्य के पास रख गई। छाया के गर्भ से शनि, सावर्णी और तपती का जन्म हुआ। एक समय छाया ने सरण्यु के पुत्र यम पर क्रुद्ध होकर उसे भयंकर शाप दे दिया। सूर्य और यम को इससे पता चल गया कि अपने पुत्र को शाप देने वाली यह स्त्री यम की माता नहीं हो सकती। सूर्य ने ध्यानावस्थित होकर देखा कि सरण्यु अपने पितृगृह उत्तर कुरु में अश्वी का रूप धर कर तपस्या कर रही है। सूर्य क्रुद्ध होकर अपने श्वसुर त्वष्टा के पास गया। त्वष्टा ने उसके क्रोध को शान्त कर सरण्यु के आने का कारण बताते हुए सूर्य को अपने प्रचण्ड तेज (ताप) को कम करके सरण्यु के पास जाने को कहा।

ऋग्वेद के पूर्वोल्लिखित दसवें मंडल के १७ वें सूक्त का देवता त्वष्टा, चित्रा नक्षत्र का देवता है। अतः वह विश्वकर्मा के नाम से प्रसिद्ध और स्वर्ग का स्थपति (बढ़ई, खाती) है। अतः उसने सूर्य को खराद पर चढ़ाकर उसके प्रभामंडल

www.thearyasamaj.org

को काट छांट कर परिष्कृत कर दिया। 'आरोप्य च क्रभ्रमिमुष्णा तेजास्त्वष्ट्रेव यत्नोल्लिखितो विभाति।' तब अश्व का रूप धर कर अश्वी का रूप धरने वाली सरण्यु के समक्ष गया। उनके सहवास से अश्विनी (द्वय) और रेवन्त का जन्म हुआ।

उपर्युक्त ऋचाओं और तदाधारित कथा में आये सभी नाम सूर्य के ही वाची हैं। त्वष्टा शब्द की निष्पति त्विष् धातु में है जिसका अर्थ है प्रभा, प्रकाश या चमक दमक। चमक-दमक, प्रचण्ड प्रकाश या ताप से युक्त त्वष्टा स्वयं सूर्य है। वही इस जगत् का शिल्पी-बढ़ई है, वही विश्वकर्मा। उसके बिना न तो जगत् की किसी वस्तु का निर्माण हो सकता है और न कोई भी वस्तु उसकी सहायता के बिना देखी जा सकती है। प्रभा सूर्य की पत्नी है, उसकी किरण है। वह सूर्य को प्रकाश देने वाली है। उसी का अपर नाम है सरण्यु। सरण्यु का अर्थ है जिसका अनुसरण या अनुगमन किया जाय। प्रभा और सरण्यु सदा सूर्य के साथ रहने वाली रश्मियाँ हैं। प्रभा और सरण्यु का ही नाम संज्ञा है इसी के पद चिह्नों पर सूर्य संक्रमण करता है।

सूर्य की अश्वरूप में और संज्ञा या सरण्यु की अश्वी रूप में कल्पना के पीछे अश्वी को गर्भधारण कर प्रसव करने की स्थिति में आने में बारह महीनों का समय लगता है। सूर्य को भी समस्त क्रान्ति वृत्त के एक बार चक्कर लगाने में बारह महीने लगते हैं- छः महीने दक्षिणायन में और छः महीने उत्तरायण में। लोक विश्वास में पितृगृह सांगानेर ही उत्तरायण का और अजमेर या सागर उसके ससुराल सागर (अन्तरिक्ष) होने की कल्पना की गई है।

संज्ञा या सरण्यु को 'जाडी जशोदा' कहने से तात्पर्य सूर्य रश्मि के उग्र ताप से ओर 'पातली पेमा' नाम देने का कारण न्यून ताप वाली रश्मि से है। संज्ञा के पति सूर्य को लंगड़ा खोड़ा या खंज कहने का कारण है सूर्य-सारथी अरुण को अनूर या जंघाहीन कहना। शिशुपाल वध में उसके सारथी का उल्लेख करते हुए कहा है-

'गतं तिरश्चीनमनूरुस्सारथे'-शिशुपाल वध-१/२।

हमारे देश के प्रायः सभी पर्वों का उत्स किसी न किसी रूप में वेदमंत्रों से और तदाधारित विरचित पौराणिक कथाओं में तथा साहित्यिक संरचनाओं में गुंफित है। उसे प्रकाश में लाकर जगत् को जनाना भी हमारा कर्तव्य होना चाहिए।

चौसर कल्याण निलयम्
१०१ भट्टयानी चौहट्टा, उदयपुर ३१३००१

ऐसे थे हमारे पूर्वज

बाल वाटिका

ऋषि शंख और लिखित दो भाई थे। दोनों धर्मशास्त्र के मर्मज्ञ थे। विद्याध्ययन समाप्त कर दोनों ने विवाह किया और अपने-अपने आश्रम अलग बनाकर रहने लगे। एक बार ऋषि लिखित अपने बड़े भाई शंख के आश्रम पर उनसे मिलने गये। उस समय आश्रम पर कोई नहीं था। लिखित को भूख लगी हुई थी तो उन्होंने बड़े भाई के बगीचे से एक फल तोड़ा और खाने लगे। वे पूरा फल खा भी नहीं सके थे कि इतने में शंख आ गए। लिखित ने उनको प्रणाम किया। शंख ने छोटे भाई को सत्कारपूर्वक समीप बुलाया, उनका कुशल समाचार पूछा और उसके पश्चात् बोले- 'भाई! तुम यहाँ आये और क्षुधा के कारण तुमने बिना किसी से पूछे फल ले लिया यह तो ठीक है, किन्तु हम ब्राह्मणों का सर्वस्व धर्म ही है। तुम तो धर्म का तत्व जानते हो। यदि किसी की अनुमति के बिना कोई चीज ले ली जाए तो उस कर्म की क्या संज्ञा होगी?' लिखित ने बिना हिचके जवाब दिया-चोरी- 'निश्चय ही मुझसे प्रमादवश यह अपकर्म हो गया है। अब क्या करना उचित है?' शंख ने कहा- कि राजा से जाकर इसका दंड ले लो। इससे इस दोष का निवारण हो जायेगा।

लिखित राजा के पास गए। राजा ने उनको प्रणाम करके अर्घ देना चाहा तो लिखित ने उन्हें रोकते हुए कहा कि राजन् इस समय मैं आपका पूजनीय नहीं हूँ। मैंने अपराध किया है इसलिए आपसे दंड प्राप्त करने आया हूँ। अपराध का वर्णन सुनकर राजा ने कहा कि नरेश को जैसा दंड देने का अधिकार है वैसे ही क्षमा करने का भी अधिकार है। तो लिखित ने कहा कि- 'विधान बनाना आपका काम नहीं। आप केवल विधान को क्रियान्वित कर सकते हैं, अतः विधान अनुसार मुझे दंड दीजिए।' उस समय दंड विधान के अनुसार चोरी का दंड था-चोर के दोनों हाथ काट देना। राजा ने लिखित के दोनों हाथ कलाई तक कटवा दिए। कटे हुए हाथ लेकर लिखित बड़े भाई के पास आये और प्रसन्नतापूर्वक उन्हें सारी बात बताई।

प्रस्तुति- भँवर लाल गर्ग, उदयपुर

thearyasamaj.o

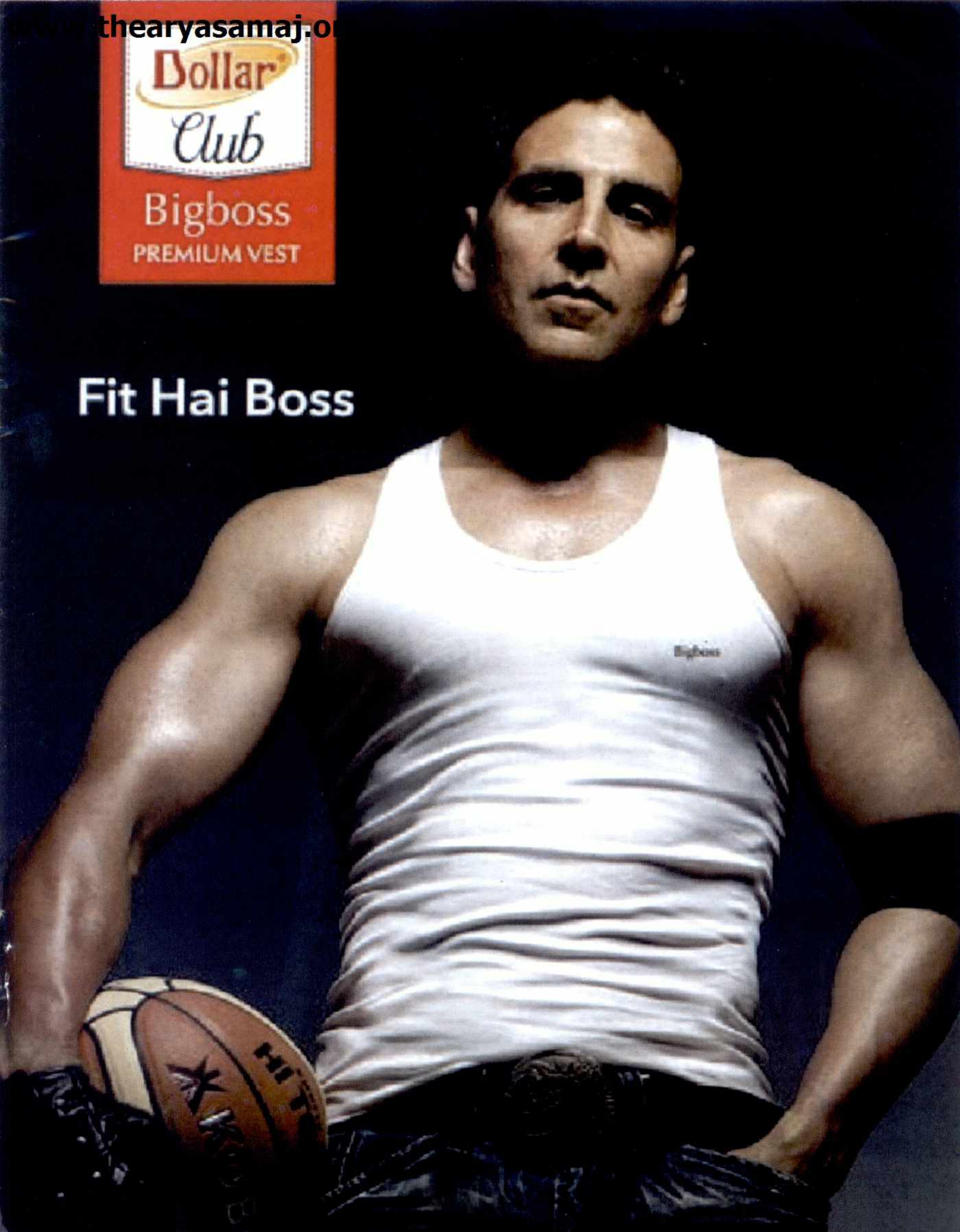

www.thearyasamaj.org

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 December-2013 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2013-2015

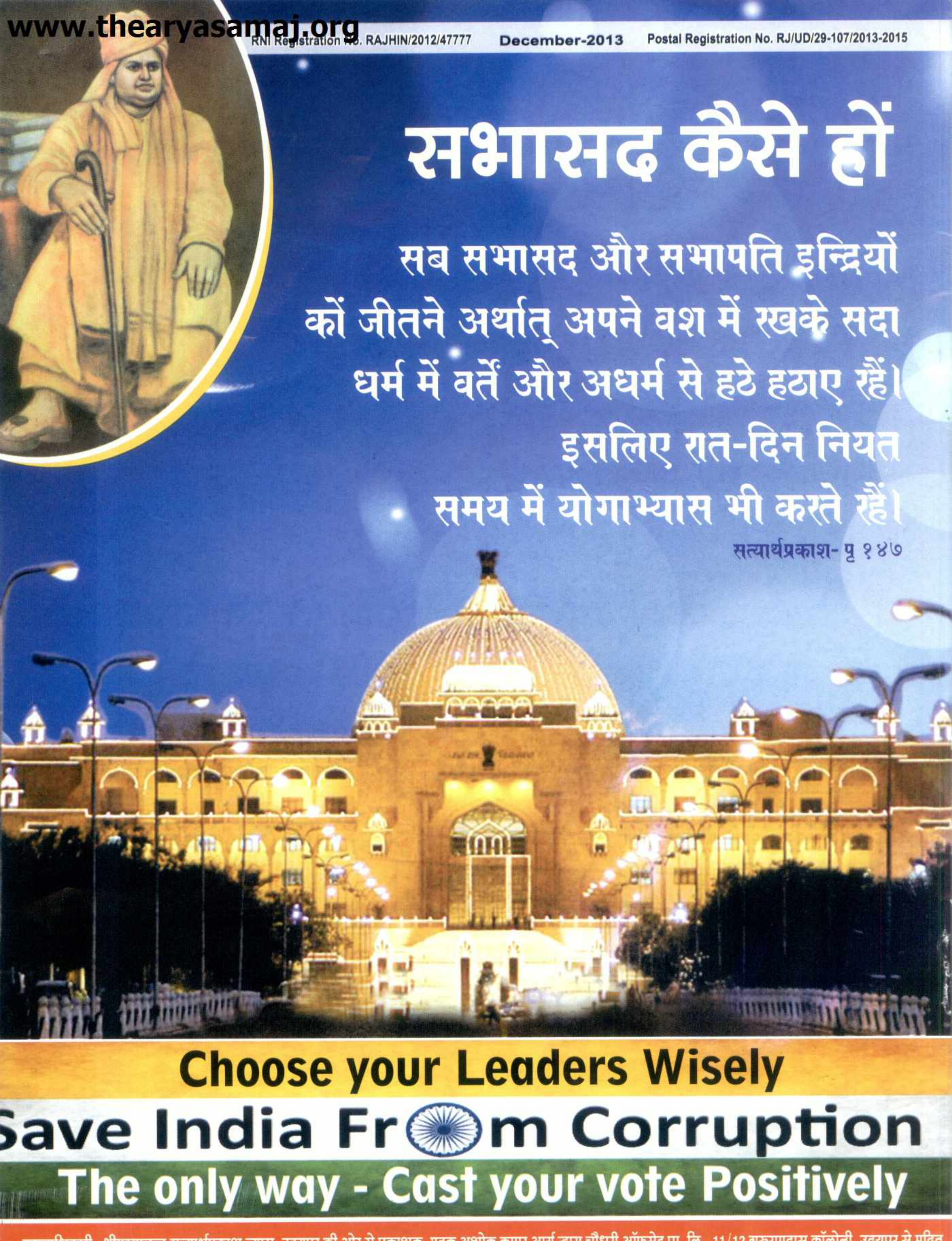

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

COPL/11964